ISSN-2321-3981

सचित्र प्रेरक बाल मासिक

# देवपुत्र

पौष २०७९ जनवरी २०२३

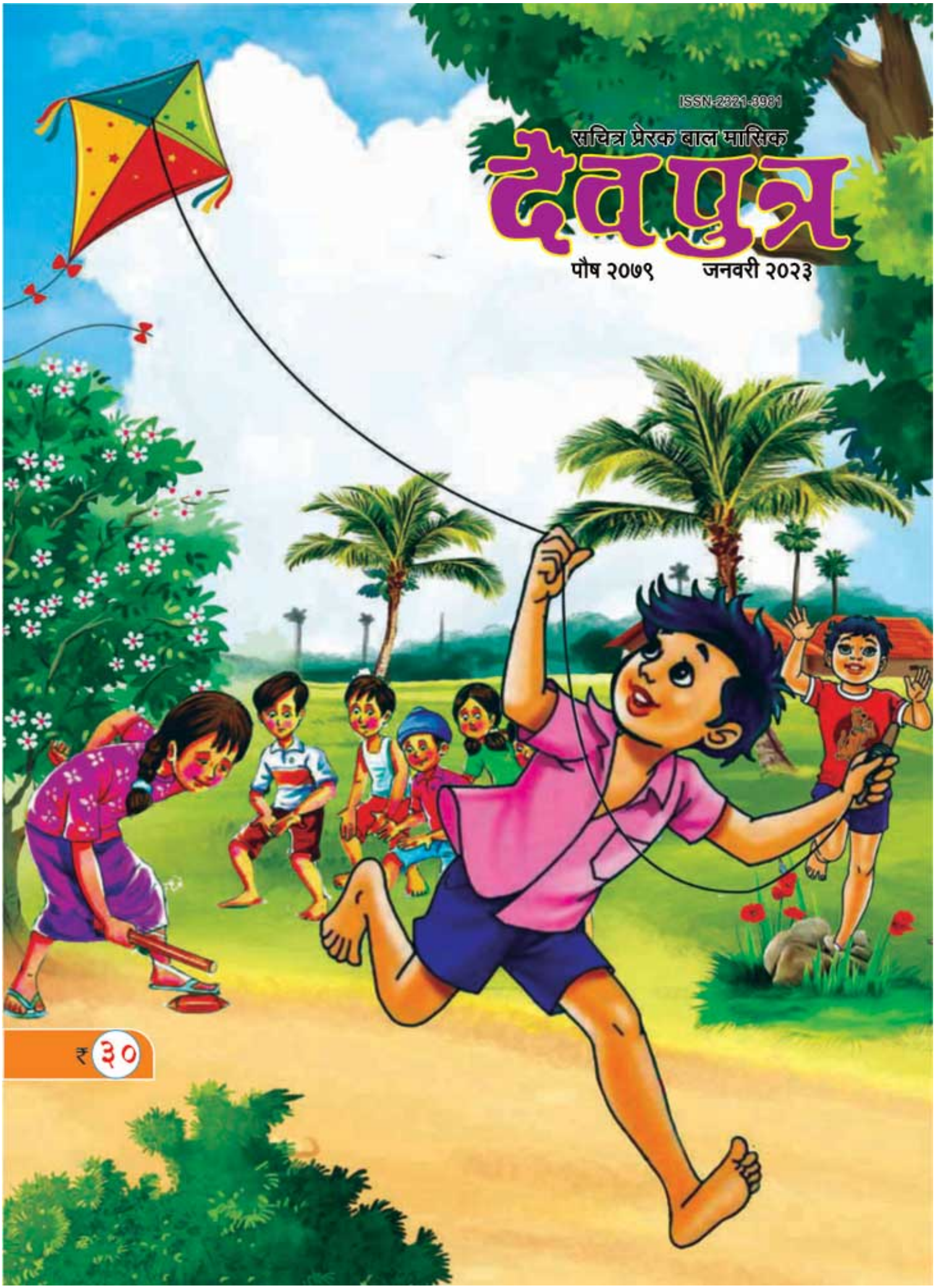

₹ ३०

कविता

# अमर रहे गणतंत्र हमारा

– शंकरलाल माहेश्वरी

मातृभूमि की बलिवेदी पर, अर्पित हो यह जीवन सारा।
विश्व पटल पर भारत का, झण्डा ऊँचा रहे हमारा।
जाति पांति का भेद नहीं है
ऐसा जग में देश हमारा।
रहती समानता है सदैव
भारत देश है सबसे न्यारा।
सामाजिक समरसता के हित, हो प्रयत्न सर्वदा हमारा।
एक रहेंगे और नेक रहेंगे सब, जीवन लक्ष्य हो यही हमारा।
राष्ट्र समृद्धि के लिये हम
मेंहनत से नित काम करें।
राष्ट्रभक्त बनकर हम सब
जग में अपना नाम करें।।
कोई काम न करें ऐसा, जिससे देश बदनाम रहे।
करे देश से जो गद्दारी, शेष न उसका नाम रहे।
भूखे नंगे गरीब लोगों की
सम्भव मदद करें हम हर।
रोजी रोटी मिले सभी को
काम करें यों मिल जुलकर।
भारत माँ की रक्षा के हित, जो सैनिक बलिदान हुये।
अमर हो गये देशभक्त वे, हम सबके अभिमान हुए।
सब प्रकार विकसित हो भारत
जन–जन सब खुशहाल रहे।
अमर रहे गणतंत्र हमारा
लहराती जय माल रहे।

– आगूचा (भीलवाड़ा)

सचित्र प्रेरक बाल मासिक

# देवपुत्र

(विद्या भारती से सम्बद्ध)

पौष २०७९ ▪ वर्ष ४३
जनवरी २०२३ ▪ अंक ०७

प्रधान संपादक
कृष्ण कुमार अष्ठाना

प्रबंध संपादक
शशिकांत फड़के

मानद संपादक
डॉ. विकास दवे

कार्यकारी संपादक
गोपाल माहेश्वरी

**मूल्य**

| | | |
|---|---|---|
| एक अंक | : | ३० रुपये |
| वार्षिक | : | २०० रुपये |
| पन्द्रहवर्षीय | : | २००० रुपये |
| सामूहिक वार्षिक | : | १५० रुपये |

(कम से कम १० अंक लेने पर)

कृपया शुल्क भेजते समय चेक/ड्राफ्ट पर केवल 'सरस्वती बाल कल्याण न्यास' लिखें।

**संपर्क**
४०, संवाद नगर,
इन्दौर ४५२००१ (म. प्र.)
दूरध्वनि: (०७३१) २४००४३९

e-mail:
व्यवस्था विभाग
devputraindore@gmail.com
संपादन विभाग
editordevputra@gmail.com

## अपनी बात

प्यारे भैया-बहिनो!

अपना प्यारा गणतंत्र दिवस आने वाला है। हम सब पूरे स्वाभिमान से अपना राष्ट्रीय ध्वज फहराएँगे। तिरंगे के केसरिया, सफेद और हरे ये तीनों रंग आज देश-विदेश के करोड़ों भारतीयों के मन में राष्ट्रीय गौरव का ज्वार-सा उठा देते हैं।

बच्चो! मैं समझता हूँ कि आप इन तीन रंगों और तिरंगे के मध्य स्थित नीले अशोक चक्र का अर्थ तो अवश्य ही जानते होंगे। केसरिया रंग शक्ति, साहस, शौर्य का प्रतीक है, सफेद सत्य और शांति का तथा हरे रंग को समृद्धि, विकास और हरियाली का प्रतीक माना जाता है। नीले रंग का चौबीस अरों वाला चक्र निरंतर गतिशीलता का प्रतीक है हमारे तिरंगे में।

नीलगगन की ओर जब हम अपने-अपने मस्तक उठाकर इस तिरंगे को देखते हैं तो मन भाव-विभोर हो उठता है। लगता है हमारा राष्ट्र भी इस झण्डे के रूप में अनंत ऊँचाइयों की ओर उठ रहा है। अच्छा, एक बात बताओ, तिरंगे के ये मनभावन रंग क्या हमारे मनों पर भी उतरे हैं? आप कह सकते हैं 'मन' होता तो है पर शरीर में कहाँ होता है? कैसा होता है? रंग, रूप, आकार कैसे हैं इसके? यह तो हम नहीं जानते। फिर इस में रंग कैसे उतरें?

ऊपर जो इन रंगों के अर्थ बताएँ हैं न, वे गुण, शक्ति, शौर्य, साहस, सत्य, शांति एवं समृद्धि व विकास के लिए निरंतर काम करने की सक्रियता हममें से प्रत्येक के जीवन में हो, ये ही तिरंगे के रंगों का मन में उतर जाना है। जैसे तिरंगा सुदृढ़ ध्वज-दण्ड पर मजबूत रस्सी के माध्यम से लहराता है, हमारे जीवन में इन गुणों का विकास, संकल्प के दण्ड पर, प्रेरणा की रस्सी से, निरंतर उच्चता प्राप्त करता रहे तो यह प्रत्येक भारतीय का सच्चा झण्डा वंदन होगा।

राष्ट्रीय ध्वज मात्र एक कपड़े का टुकड़ा या साधारण झण्डा नहीं है यह प्रत्येक भारतीय के लिए सर्वोच्च मानबिन्दु है अत: इसके रंग प्रतीकों के रंग हमारे मन में हमारे आचरण में सदैव दिखना ही चाहिए।

आइये, अपने राष्ट्रीय ध्वज को प्रणाम करते हुए परमेश्वर से प्रार्थना करें कि वह तिरंगे के रंगों में हमारे मन को स्थाई रूप से रंग दें।

आपका
बड़ा भैया

web site - www.devputra.com

# ॥ अनुक्रमणिका ॥

## कहानी


- आओ भ्रमण करें -डॉ. सेवा नंदवाल ०५
- सुन्दर मुंदरिये... हो -कुसुम अग्रवाल ०८
- मकर संक्रांति की मस्ती -नीतीष कुमार २४
- परिश्रम सबसे बड़ा -अलका जैन ३६
- राजू का गुस्सा -सुमन ओबेरॉय ४२


## छोटी कहानी


- संतो का सपना -टीकमचंद ढोडरिया २९
- दो बातूनी -दीपांशु जैन ४६


## एकांकी


- पहली पाठशाला -पद्मा चौगाँवकर १८


## लघुकथा


- भावी रत्न -मीरा जैन ११


## अनुवाद (तमिल कहानी)


- आलसी सूरज -एस. भाग्यम् शर्मा ३२


## चित्रकथा


- पहले कैसे -देवांशु वत्स १५
- खुशहाली -संकेत गोस्वामी ४५
- खेलो मेरे साथ -देवांशु वत्स ४९


## कविता


- अमर रहे गणतंत्र हमारा -शंकरलाल माहेश्वरी ०२
- पतंग -डॉ. रोहिताश्व अस्थाना ०७
- सूर्य नमस्कार -पवन पहाड़िया २३
- स्वामी विवेकानंद -डॉ. विनोद चंद्र पांडेय 'विनोद' ३४
- उनको नमन करें -अखिलेश श्रीवास्तव 'चमन' ३५
- सरसों के फूल -राजा चौरसिया ५०


## स्तंभ


- गोपाल का कमाल -तपेश भौमिक १२
- सच्चे बालवीर -रजनीकांत शुक्ल १६
- शिशु गीत -राधेश्याम सक्सेना २१
- राजकीय मछलियाँ -डॉ. परशुराम शुक्ल २२
- छः अंगुल मुस्कान - २२
- बालसाहित्य की धरोहर -डॉ.नागेश पाण्डेय 'संजय' २६
- शिशु महाभारत -मोहनलाल जोशी ३०
- पुस्तक परिचय - ३८
- विज्ञान व्यंग्य -संकेत गोस्वामी ३९
- थोड़ी थोड़ी डॉक्टरी -डॉ. मनोहर भण्डारी ४०
- अशोक चक्र : साहस का सम्मान - ४४
- आपकी पाती - ४७
- विस्मयकारी भारत -रवि लायटू ५१


## बौद्धिक क्रीडा


- बढ़ता क्रम -देवांशु वत्स ३१
- कौन सा तिरंगा किसका ? -चाँद मोहम्मद घोसी ३३


## प्रेरक प्रसंग


- अपमान का बदला -गोविन्द भारद्वाज ४१

**क्या आप देवपुत्र का शुल्क नेट बैंकिंग से जमा करा रहे हैं? तो कृपया ध्यान दें!**

देवपुत्र का शुल्क इसकी प्रकाशन संस्था - **सरस्वती बाल कल्याण न्यास** के खाते में ही जमा कराएँ।
विवरण इस प्रकार है- खातेदार - **सरस्वती बाल कल्याण न्यास** बैंक - **स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, एम.वाय.एच.परिसर शाखा, इन्दौर** खाता क्रमांक-**38979903189** चालू खाता **(Current Account) IFSC- SBIN0030359** राशि जमा करने के बाद जमा पर्ची को देवपुत्र के ई-मेल **ID devputraindore@gmail.com** पर अवश्य भेजिए। नेट बैंकिंग में प्रेषक के कॉलम में पहले अपना स्थान लिखें फिर **सरस्वती शिशु मंदिर** का संक्षेप लिखें तो सन्देश ठीक आता है। उदाहरण के लिए -सरस्वती शिशु मंदिर, संजीत मार्ग, मंदसौर ने देवपुत्र का शुल्क भेजा तो उन्हें प्रेषक में लिखना चाहिए - **"मन्दसौर संजीत मार्ग SSM"** आशा है सहयोग प्रदान करेंगे।

# आओ भ्रमण करें

– डॉ. सेवा नन्दवाल

''निसर्ग! तुम तीन दिनों बाद शाला आए हो। यह अच्छी बात नहीं... अनुपस्थिति का कारण?'' शिक्षिका वसुंधरा ने शिकायती स्वर में पूछा। ''क्षमा कीजिए दीदी! मैं पर्यटन पर गया था।'' सकुचाते हुए निसर्ग ने बताया तो अधिकांश बच्चों के चेहरों पर मुस्कान बिखर गई। ''यह पर्यटन क्या होता है निसर्ग?''– दक्ष ने नाटकीय अंदाज में पूछ लिया। ''लो तुम्हें नहीं मालूम?'' निसर्ग ने उल्टा उसे ही कठघरे में खड़ा करना चाहा। ''मुझे क्या अधिकांश बच्चों को नहीं मालूम होगा।'' सहपाठियों की ओर देखते हुए भव्या ने पलटवार किया।

''मैं बताता हूँ, पर्यटन मतलब भ्रमण। घूमना–फिरना''– कुश ने तत्परता दिखाई। कुछ विद्यार्थी शिक्षिका की ओर ताकने लगे। वसुंधरा दीदी बोलीं– ''हाँ, कुश ठीक बता रहा है। अच्छा चलो आज इसी बात पर चर्चा हो जाए।'' वसुंधरा ने कहा तो सारे बच्चों ने तालियाँ बजाकर जैसे उनकी बात का स्वागत कर दिया।

''इसका तात्पर्य यह है कि किसी स्थान विशेष की यात्रा या किसी महत्वपूर्ण स्थल को देखने जाना पर्यटन है।'' मानस ने कहा। ''हाँ, बस मामूली अंतर है... कहते हुए दीदी रुक गईं। ''क्या अंतर दीदी?'' हनी ने पूछा। ''अंतर यही कि जब हम किसी व्यक्तिगत कार्य से जैसे उपचार कराने, शिक्षा प्राप्त करने या किसी से मिलने के कारण जाते हैं तो वह यात्रा कहलाती है जबकि किसी व्यक्ति या समूह के द्वारा किसी मनोरंजन के उद्देश्य से की गई यात्रा पर्यटन कहलाती है।'' वसुंधरा ने समझाया।

''मतलब दोनों में सूक्ष्म अंतर है।'' कुश ने कहा। ''अच्छा तुम लोगों को पता है पर्यटन को महत्व प्रदान करने के लिए हमारे यहाँ प्रतिवर्ष पर्यटन दिवस मनाया जाता है।'' वसुंधरा ने कहा। ''कब दीदी?'' दक्ष ने पूछा। ''इसी महीने याने जनवरी की २५ तारीख को।'' शिक्षिका ने बताया। ''याने गणतंत्र दिवस के ठीक एक दिन पूर्व?'' दक्ष बोला। ''हाँ और इस दिवस को मनाने की शुरुआत हुई वर्ष १९४८ से जबकि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विश्व पर्यटन दिवस भी मनाया जाता है २७ सितंबर को।'' दीदी ने जानकारी प्रदान की।

''इस पर्यटन दिवस को मनाने की आवश्यकता क्यों पड़ी, मनुष्य तो वैसे ही घूमने का शौकीन होता है।'' हनी ने प्रश्न किया। ''पर्यटन का विधिवत महत्व बताने के लिए, पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए, इससे होने वाले लाभ के लिए और पर्यटन में पर्याप्त रुचि जाग्रत करने के लिए।'' वसुंधरा ने स्पष्ट किया।

''दीदी! पर्यटन से क्या लाभ हो सकते हैं?'' मानस ने जानना चाहा।

वसुंधरा मुस्कुराते हुए बोली– ''लाभ तो बहुत सारे होते हैं लेकिन इसका उत्तर मैं तुम लोगों से सुनना चाहूँगी, एक–एक करके बताने का प्रयास करो।'' भव्या ने शुरुआत की– ''इससे हमारी नीरसता, एकरसता समाप्त होती है। एक से दैनंदिनी चक्र से हम बोरियत अनुभव करने लगते हैं, उससे छुटकारा पाने के लिए हमें भ्रमण की आवश्यकता पड़ती है।'' कुश ने योगदान दिया–

''वैसे भी घूमना–फिरना हमारे स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद होता है।'' दक्ष ने कहा– ''इससे नये–नये स्थानों का ज्ञान प्राप्त होता है।'' हनी बोली– ''पर्यटन से हम, प्रकृति के निकट पहुँचते हैं।'' ''पर्यटन स्थल के प्रति हमारी आत्मीयता बढ़ती है जिससे उसकी देख–रेख, रख–रखाव, साफ–सफाई के प्रति उत्तरदायित्व की भावना विकसित होती है।'' अमन ने बताया।

''पर्यटन से अनेक लोगों को आजीविका मिलती है।'' तमन्ना ने बताया।

''इससे विविधता में एकता का परिचय मिलता है।'' कुश ने कहा। ''हमारी मानसिक थकान मिटती है और आनंद की प्राप्ति होती है।'' मानस बोला।

''हमारे यहाँ धार्मिक, ऐतिहासिक स्थलों की भरमार है उनसे परिचय पाने का सुअवसर मिलता है तथा इस बहाने वहाँ की देख–रेख, सफाई होती रहती है।'' दक्ष ने कहा। ''हाँ, साफ–सफाई पर याद आया। कई लोग बड़ी–बड़ी ऐतिहासिक इमारतों पर चाक या कोयले से अपना नाम तिथि अंकित कर देते हैं जिससे उनकी दीवार बदरंग होने लगती हैं।'' कुश ने बताया।

वसुंधरा दीदी को जैसे कुछ याद आया– ''अच्छा तुम्हें पता है स्वच्छता में नंबर वन हमारे शहर को अब पर्यटन के क्षेत्र में भी प्रथम रहने का पुरस्कार मिला है। आज ही मैंने समाचार–पत्र में पढ़ा है।'' ''अच्छा, यह पुरस्कार किसे और किस आधार पर मिलता है?'' कुश ने जिज्ञासा व्यक्त की।

''इस पुरस्कार का हकदार वहीं शहर होता है जो पर्यटकों को अच्छी सुविधाएँ उपलब्ध कराता है। जैसे सड़कें, टॉयलेट, स्ट्रीट लाइट, परिवहन, बाग–बगीचे, पानी आदि की व्यवस्था सुचारू रूप से कर सके।'' वसुंधरा ने विस्तार से बताया।

''मतलब इस क्षेत्र में भी हम बधाई के पात्र हुए?'' तमन्ना बोली, ''हाँ बिलकुल ठीक है।'' वसुंधरा बोली। ''दीदी! फिर हो जाए?'' मुस्कान ने मुस्कुराते हुए कहा। ''क्या हो जाए?'' वसुंधरा ने पूछा। ''एक पर्यटन यात्रा। हमारे शहर के आस–पास ऐसे अनेक पर्यटन स्थल हैं।'' मानस ने बताया।

''ठीक है, पर्यटन दिवस पर कहीं चलते हैं लेकिन अधिक दूर नहीं जाएँगे। क्योंकि उसी दिन शाम तक वापस लौटना पड़ेगा क्योंकि अगले दिन गणतंत्र दिवस जो मनाना है।'' वसुंधरा ने स्मरण कराया। ''ठीक है दीदी!'' विद्यार्थीगण एक स्वर में बोल उठे क्योंकि और कोई चारा नहीं था।

तभी घंटी बज उठती है। ''अब यह घंटी भी कुछ कह रही है।'' दक्ष ने कहा। ''क्या?'' हनी ने पूछा। ''यही कि कक्षा की लाइट, पंखें बंद करो और शालीनतापूर्वक अपने घर पहुँचो जहाँ तुम्हारी प्रतीक्षा हो रही होगी।'' वसुंधरा दीदी ने हँसते हुए कहा।

**– इन्दौर (म. प्र.)**

# पतंग

– डॉ. रोहिताश्व अस्थाना

आसमान में चली पतंग।
कितनी है मनचली पतंग।।

बाँध गले में अपने डोर,
उड़ी पंख बिन किया न शोर,
नाचा बच्चों का मन–मोर,
किया सभी ने मिल हुड़दंग।
आसमान में चली पतंग।।

पीली, नीली, लाल–सफेद।
बस रंगों का ही है भेद।
आसमान में करने छेद।
चलीं पतंगें, रंग–बिरंग।
आसमान में चली पतंग।।

चन्दा मामा का कुछ हाल।
लेने भेज रहे तत्काल।
बड़ी पतंगें संध्या काल।
बच्चे भी हैं बड़े दबंग।
आसमान में चली पतंग।।

– हरदोई (उ. प्र.)

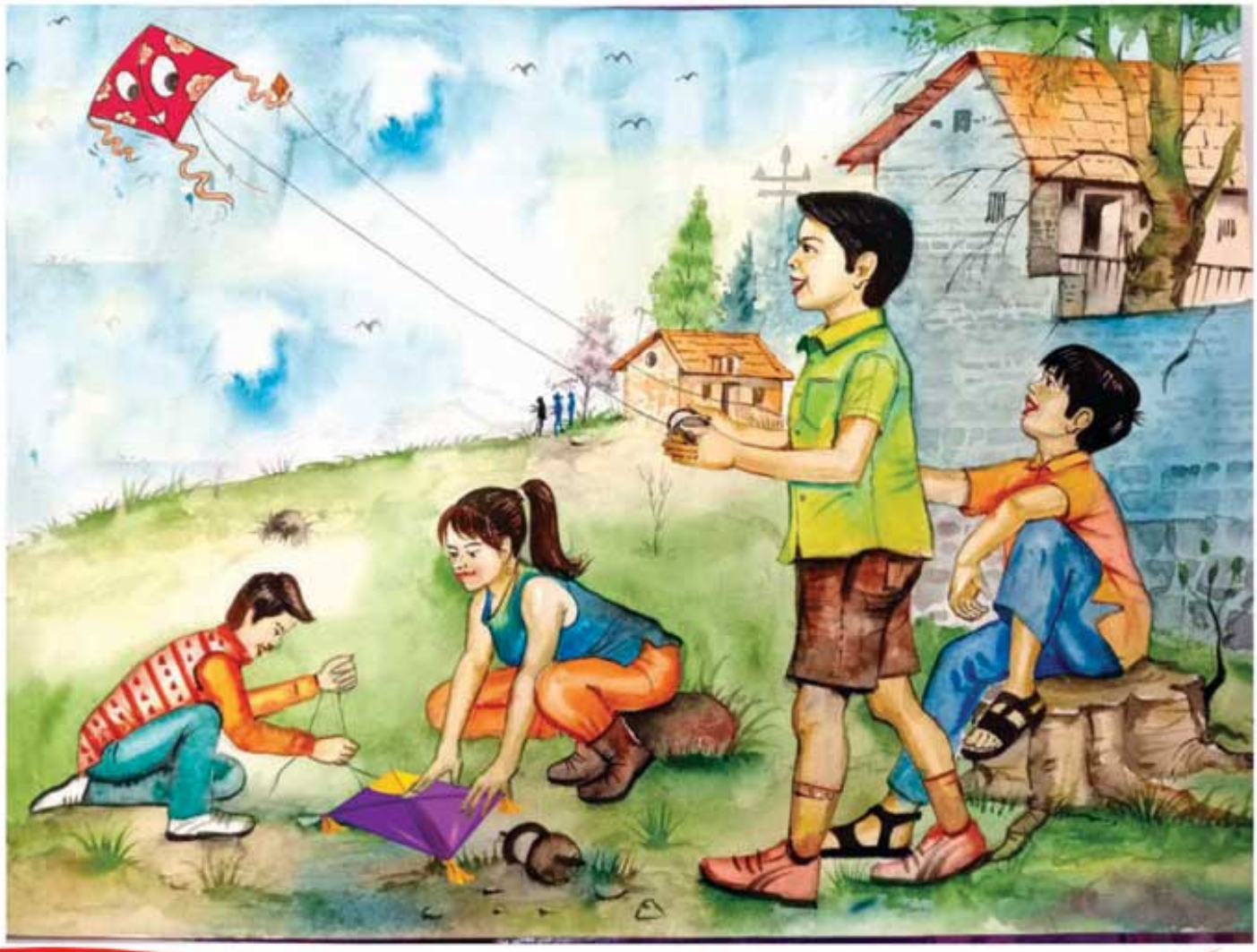

# सुंदर-मुंदरिये!... हो

– कुसुम अग्रवाल

''रमन! दूध पी लो।'' माँ ने आवाज लगाई।

रमन अपने घर के बाहर, बरामदे में बैठा, धूप सेक रहा था। एक तो रमन को सर्दी सहन करने की बिल्कुल भी आदत ही नहीं थी, उस पर इस समय उनके शहर लुधियाना में भयंकर सर्दी पड़ रही थी। इससे पहले वे लोग मुंबई में रहते थे। उसके पिताजी इसी वर्ष स्थानांतरित होकर यहाँ आए थे। पंजाब, उत्तरी भारत का एक ठंडा प्रदेश है, उस पर पौष का महीना। रमन की तो हालत पतली हो रही थी। यह तो धन्यवाद था कि आज विद्यालय की छुट्टी थी। १३ जनवरी जो थी। शिक्षिका ने कहा था– १३ जनवरी को लोहड़ी के उपलक्ष्य में विद्यालय में छुट्टी रहेगी।

छुट्टी का पूरा लाभ उठाकर, सुबह-सुबह हल्की सी धूप निकलते ही, रमन इस बरामदे में आकर बैठ गया था। रमन की छोटी बहन, जोकि अभी केवल चार महीने की थी, उसके पास ही, पालने में सो रही थी। रमन की माँ ने आज उसका पालना भी धूप में निकाल दिया था ताकि सुबह-सुबह उसके नन्हें से बदन को भी कुछ गर्माहट मिल जाए।

रमन बरामदे में बैठा, बाहर के दृश्य देख रहा था। सड़क के उस पार गरमा-गरम चाय का ठेला लग गया था। वहीं पास में अलाव भी जला दिया गया था क्योंकि उस जगह अभी धूप नहीं थी। वहीं चाय वाले के साथ उसके दो-चार साथी बैठकर आग ताप रहे थे और गप्पें हाँक रहे थे। इधर-उधर खुले मैदान में और भी कई लोग धूप का सेवन कर रहे थे।

महानगर मुंबई में, एक बिल्डिंग के आठवें माले पर एक छोटे-से फ्लेट में रहने वाले रमन के लिए ये अनुभव नए थे। अत: उसे बड़ा आनंद आ रहा था। वह अंदर नहीं जाना चाहता था। उसने अपनी माँ से कहा– ''माँ! दूध बाहर ही ला दो।''

''नहीं! अभी मैं बाहर नहीं आ सकती। मुझे अभी बहुत काम हैं। तुम जल्दी से रसोई में आओ और दूध ले जाओ। हाँ, बाहर बैठकर पी लेना, बहन के पास। उसका ध्यान भी रखना।'' माँ ने रसोई में से ही कहा।

रमन की माँ रसोई में तिल सेक रही थीं। क्योंकि अगले दिन ही मकर संक्रांति थी। मकर संक्रांति के पर्व पर तिल और गुड़ के लड्डू बनाना उनके घर की परपंरा थी। इसके साथ-साथ वह गेहूँ का खींच भी बना रही थी।

''ठीक है आता हूँ। रमन ने कहा और वह दौड़कर गया और दूध का गिलास बाहर बरामदे में ले आया। अभी वह बरामदे में बैठकर दूध पी ही रहा था

कि उनके दरवाजे पर तीन–चार बच्चे आए। पहले तो वे दरवाजे पर खड़े रहकर कुछ देर तक फुसफुसाते रहे फिर अचानक से ही उन्होंने एक गीत गाना शुरू कर दिया।

सुंदर–मुंदरिये!..... हो
तेरा कौन बेचारा,..... हो।
दुल्ला भट्टी वाला,..... हो।
दुल्ले धी व्याही,..... हो।
सेर शक्कर पाई,..... हो।
कुड़ी दे बाझे पाई,..... हो।
कुड़ी दा लाल पटाखा,..... हो।
कुड़ी दा जीवे काका,..... हो।
दे माई लोहड़ी–जीवे तेरी जोड़ी।
लोहड़ी दो जी लोहड़ी।

रमन बड़ी हैरानी से उनको देखता रहा परंतु

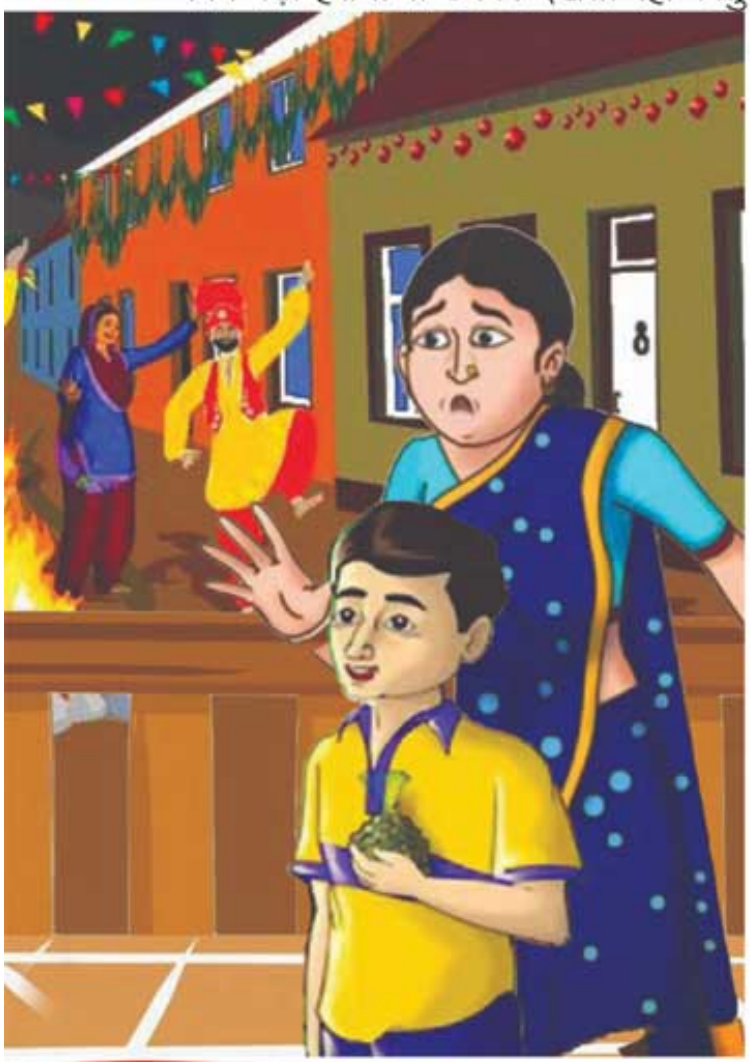

फिर उसको लगा कि वे उससे कुछ माँग रहे हैं। परंतु क्या? यह उसकी समझ में नहीं आ रहा था क्योंकि ऐसा उसने पहले कभी देखा–सुना नहीं था। उसने अपनी माँ को आवाज लगाई– ''माँ! देखो ना, कुछ बच्चे आए हैं। वे कुछ माँग रहे हैं।''

''हाँ, हाँ, पौष मास है। कल मकर–संक्रांति है। कल से सूर्यदेव धनु राशि को छोड़कर मकर राशि में प्रवेश कर जाएँगे। इसलिए खूब दान पुण्य करना चाहिए। देखो, उधर अलमारी में तुम्हारे कुछ पुराने कपड़े रखे हैं। तुम इनको वह दे दो और यह लो कुछ तिल के लड्डू व खिचड़ी भी ले जाओ।'' माँ ने अपना काम करते–करते ही रमन को निर्देश दिया।

रमन की माँ की यह बात उनके माली ने भी सुनी जो कि उनके बगीचे की देखभाल करने आया था और वह हँसने लगा।

फिर बोला–''नहीं बीजी! इन्हें ये सब दान नहीं चाहिए। ये तो समृद्ध घरों के बच्चे हैं– लोहड़ी माँग रहे हैं। इन्हें मूँगफलियाँ, गजक, रेवड़ियाँ, सूखी लकड़ियाँ या पैसे चाहिए। लोहड़ी मनाने के लिए।''

अब रमन की माँ से रहा नहीं गया। वह बाहर आ ही गई और बोली– ''यह लोहड़ी क्या होता है?''

इस पर माली बोला– ''लोहड़ी पंजाब का एक प्रसिद्ध त्यौहार है। यह १३ जनवरी को मनाया जाता है। यूँ समझ लो सर्दी दूर भगाने और आनंद उठाने का एक उपाय ही है। क्योंकि इस दिन सब लोग मिलकर लकड़ियाँ इकट्ठी करते हैं तथा रात को उन्हें जलाते हैं। तथा उसके आस–पास नाचते–गाते हैं। बड़ा आनंद आता है। उसी अग्नि में तिल व मूँगफलियाँ भी चढ़ाई जाती हैं। दुल्ला–भट्टी नामक दानवीर की कहानी भी जुड़ी है इस पर्व के साथ।

ये बच्चे अपने गीत में उसी की यशगाथा कह रहे थे। वे इस पर्व को मनाने के लिए कुछ माँगने आए हैं। ये पंजाब की परंपरा है।''

''मगर हम लोग तो मकर संक्रांति मनाते हैं।

हमें लोहड़ी से क्या लेना-देना? हम कोई पंजाबी थोड़ी ना हैं?'' यह कहकर रमन की माँ बड़बड़ाते हुए फिर से रसोई घर के अंदर चली गई और बेचारे बच्चे निराश ही लौट गए।

कुछ ही देर बाद उनके घर एक युवती आई। वह बहुत सजी-धजी थी तथा उसके हाथ में एक बड़ी टोकरी थी।

''माँ हैं क्या?'' उसने रमन से पूछा।

''हाँ! आप अंदर चले जाइए, माँ रसोई में हैं।'' रमन ने कहा।

इतना कहने पर वह युवती अंदर चली गई, रसोई में, जहाँ रमन की माँ थी और बोली- ''चाची जी! आज मेरे भाई की शादी की पहली लोहड़ी है अत: हम लोग पूरे मोहल्ले में लोहड़ी बांट रहे हैं। अब आप लोग भी हमारे मोहल्ले का हिस्सा हैं अत: मैं आपके लिए भी लाई हूँ। यह कहकर उस युवती ने रमन की माँ को एक पैकेट दिया जिस में मूँगफलियाँ और रेवड़ियाँ थीं। रमन की माँ ने हिचकिचाते हुए वह पैकेट रख लिया। वह युवती इतने प्रेम से दे रही थी तो भला मना भी कैसे करती परन्तु फिर जिज्ञासावश पूछ ही बैठी- ''यह पहली लोहड़ी क्या होता है?''

इस पर वह युवती हँसकर बोली- ''घर में किसी की शादी के बाद जो पहली लोहड़ी आती है हम लोग उसे धूमधाम से मनाते हैं। इसी प्रकार यदि घर में किसी लड़के का जन्म होता है तो उस वर्ष की लोहड़ी को भी धूमधाम से मनाया जाता है क्योंकि वह उस बालक की पहली लोहड़ी होती है।'' इतना कहकर वह युवती चली गई।

रमन बाहर बैठा-बैठा सारी बातें सुन रहा था। वह बोला- ''माँ! इस तरह से तो मेरी बहन की भी यह पहली लोहड़ी है। अत: हमें भी यह लोहड़ी धूमधाम से मनानी चाहिए।''

''चुपचाप बैठे रहो।'' रमन की माँ को थोड़ा गुस्सा आ गया था। ''ऐसे सभी त्यौहार थोड़े ना मनाए जाते हैं। और सुना नहीं वह क्या कह रही थी? लड़का होने पर। तुम्हारी बहन लड़की है।'' और फिर वह अपने काम में लग गई। रमन अपनी माँ की बातें सुनकर कुछ उदास हो गया था।

शाम हो गई थी। रमन के पिता कार्यालय से लौट आए थे। आते ही उन्होंने बहुत सारे उपहार रमन की माँ को दिए और बोले- ''भाई! आज तो मजा आ गया। कार्यालय के बहुत से लोगों के घर में पहली लोहड़ी थी अत: उन्होंने कार्यालय में भी उपहार बाँटे। आज तो ऑफिस में मूँगफलियाँ और बढ़िया गजकों की भी बहार आई हुई थी। अरे भाई! पंजाब में आ गए हैं। जैसा देश वैसा भेष। मैंने तो खूब मजे लिए।''

रमन की माँ भोजन बना चुकी थी। सबने मिलकर भोजन किया। अभी खाना खाकर वे टी. वी. देखने बैठे ही थे कि बाहर जोर-जोर से ढोल बजने और नाचने-गाने की आवाजें आनी शुरु हो गईं।

उसके साथ-साथ ही वही युवती, जो सुबह लोहड़ी बाँटने आई थी, रमन के घर फिर आई। अभी वह सुबह से भी अधिक सजीधजी थी। वह रमन की माँ को बोली- ''चाची जी! माँ आपको बाहर बुला रही है। हम लोगों ने लोहड़ी जलाई है। सब लोग गिद्दा डाल रहे हैं। आप भी आइए ना।''

''नहीं-नहीं! भला मुझे गिद्दा नृत्य कहाँ आता है?'' रमन की माँ ने सकुचाते हुए कहा।

''इसमें कुछ नहीं होता। सबको देखकर आप भी नाचने लग जाओगी।'' उस युवती ने हँसते हुए कहा और फिर रमन के पिता को बोली- ''चाचाजी! आप भी आइए और बच्चों को भी लाइए। हम सब मिलकर बहुत मजे करने वाले हैं। भाँगड़ा डाँस भी होगा। आपको बहुत अच्छा लगेगा।''

''हाँ, हाँ आते हैं।'' रमन के पिता ने कहा। युवती के जाते ही रमन के पिता ने कहा- ''चलो हम लोग भी लोहड़ी मनाने चलते हैं। जब पंजाब में आ ही गए हैं तो फिर भला लोहड़ी मनाने से क्यों चूकें?''

''मगर हम तो मकर संक्रांति मनाएँगे ना?'' रमन की माँ ने कहा। ''भाई! वह भी मना लेंगे। कल हम पतंग भी उड़ाएँगे और सितोलिया भी खेलेंगे। और इतनी सर्दी में भी यदि तुम्हारा साहस हो तो सतलुज नदी में स्नान कराने भी ले चलूँगा। ओ होए! हम लुधियाना में हैं। ऐसी वैसी जगह नहीं। वैसे तो पूरे पंजाब में ही नदियों की क्या कमी है? फिर ये कहाँ लिखा है कि लोहड़ी मनाने के बाद हम मकर संक्रांति नहीं मना सकते? हम दोनों मनाएँगे क्योंकि दोनों एक ही हैं। कोई अधिक फर्क नहीं है।''

''हाँ, हाँ, चलते हैं पिताजी!'' कहकर रमन झट से तैयार होने चला गया। सुबह से उसके मन में लोहड़ी को लेकर जो उत्साह और उमंगें उछाल मार रही थीं, वे अब पूरी होने जा रही थीं। वह खुश होकर, उछल-कूद कर जोर-जोर से गाने लगा- ''सुंदरी-मुंदरी हो..... सुंदरी-मुंदरी हो.....।'' बस इतना ही क्योंकि अभी उसे एक ही पंक्ति याद हुई थी।

रमन की माँ भी अपनी अलमारी खोलकर बैठ गई। उसके पास एक गोटे के काम वाला सलवार कुर्ता था। उसने वही निकाला। अभी वह यही सलवार कुर्ता पहनकर तैयार होने वाली थी- लोहड़ी में गिद्दा डालने जो जाना था।

**- कांकरोली (राजस्थान)**

लघुकथा

# भावी रत्न

**- मीरा जैन**

आश्चर्य चकित बाबूराम कृतज्ञता पूर्ण शब्दों में हाथ जोड़ बोला- ''मुझे क्षमा कर दो रामदीन! तुम मेरे पड़ोस में ही केले का ठेला लगाते हो इसलिए तुमसे बैर पाले बैठा था, आज तुम ना होते तो ना जाने गाय कितने केले खा जाती और मेरा बहुत नुकसान हो जाता। बहुत-बहुत धन्यवाद भाई।''

इतना कहते-कहते बाबूराम की आवाज कातर हो गई। इसके साथ ही पलटकर पास ही खड़े बेटे संजू की पिटाई करने ही वाला था कि रामदीन ने उसे यह कहते हुए रोक लिया- ''बाबूराम! संजू को मत मारो, उसे तुम्हारी मार से बचाने के लिए ही मैंने गाय को भगाया था।''

''क्या कह रहे हो? इसके पहले भी मैंने संजू को उसकी गलतियों के लिए कई बार डांटा-मारा, किन्तु तुमने मुझे कभी नहीं रोका, कभी नहीं टोका?''

रामदीन भावुक होकर बोला- ''इससे पहले जो कुछ भी होता था वह तुम पिता-पुत्र का व्यक्तिगत मामला था, किन्तु आज इसका संबंध देशभक्ति से था इसलिए मैंने गाय को भगाया। देखो उस विद्यालय के प्रांगण में लहराते हुए तिरंगे को। ध्वज वंदन के साथ जैसे ही राष्ट्रगान प्रारंभ हुआ तुम्हारा संजू तुरंत ही उसी ओर मुखकर पूरी श्रद्धा के साथ, सावधान की मुद्रा में खड़ा हो गया। इसे ध्यान ही नहीं रहा कि गाय ठेले तक पहुँच गई है। देश के प्रति इसकी श्रद्धा को देख मैं पिघल गया। तुम इसे फिर से विद्यालय भेजना शुरु कर दो। यह निश्चित ही बहुत बड़ा देशभक्त बनेगा।''

दो दिन बाद ही संजू को विद्यालय की गणवेश में देख रामदीन गद्‌गद् हो उठा।

**- उज्जैन (म. प्र.)**

# तीन दरिया के लोग

– तपेश भौमिक

पुराने जमाने में राजे–महाराजों के दरबार में मंत्रियों के साथ–साथ कवि, गायक, भांड, नर्तक, वैद्य, सलाहकार आदि भी हुआ करते थे। इन्हें रत्न कहा जाता था। कभी–कभी एक राज्य के रत्नों के साथ दूसरे राज्यों के रत्नों की प्रतियोगिताएँ भी हो जाया करती थीं। विजयी रत्नों को पुरस्कृत भी किया जाता था।

ऐसे ही एक बार बंगाल के बर्धमान के महाराज ने नदिया के महाराज कृष्णचन्द्र को कहला भेजा कि आप अपने गोपाल को मेरे यहाँ भेज दें, मेरे दरबारी भांड नेपाल अपने आपको सर्वश्रेष्ठ भांड कहता है। मैं उन दोनों के बीच एक प्रतियोगिता करवाना चाहता हूँ।

महाराज कृष्णचन्द्र को अपने गोपाल पर काफी गर्व था। अत: उन्होंने शुभ मुहूर्त देखकर उन्हें कई दरबारियों के साथ बर्धमान राज दरबार के लिए रवाना कर दिया। गोपाल भी कब चूकने वाले थे। वे भी खुशी–खुशी निकल पड़े।

बर्धमान महाराज ने अतिथियों की अच्छी आवभगत की। निर्धारित तिथि को दरबार लगा। महाराज ने गोपाल और अपने भांड नेपाल के आगे एक ऐसा प्रश्न रखा कि सारी सभा में सन–सनी फैल गई। सभी एक–दूसरे के मुँह ताकने लगे। महाराज ने दोनों के सामने यह प्रस्ताव रखा कि आप दोनों का दो दिन बाद दरिया के उस पार, मँझधार और इस पार के एक–एक व्यक्ति को दरबार में पेश करना है। वैसे तो प्रश्न बहुत ही सहज है पर मैं उनसे पूछताछ कर यह पता लगाऊँगा कि वे सही अर्थों में उस पार, मँझधार और इस पार के हैं या नहीं। अगर आप दोनों ही मुझे संतुष्ट कर सकते हैं तो दोनों को ही पुरस्कृत किया जाएगा। अत: आप दोनों चिंतामुक्त होकर अपने–अपने अभियान में जुट जाइए।

नेपाल भांड यह सोचकर खुश था कि महाराज कभी अपने भांड को पराजित नहीं देखना चाहेंगे। वैसे भी मेरी जान–पहचान इतनी है कि मैं पुराने से पुराने लोगों को भी दरबार में उपस्थित कर सकता हूँ। गोपाल को तो कोई जानता तक नहीं, भला उसके कहने पर कोई राजदरबार में क्यों आयेगा। उसकी हार तो निश्चित है।

नेपाल ने अपने काम में अधिक फुर्ती दिखाई। वह सबसे पहले दरिया के उस पार के सबसे पुराने एक निवासी को सारी बात बताई और अगले दिन सही समय पर दरबार में हाजिर होने के लिए राजी कर लिया। साथ ही उसने यह भी कहा कि डरने की कोई

बात नहीं है, महाराज संतुष्ट होने पर उन्हें भी पुरस्कृत करेंगे। मँझधार के लिए उसने एक खेवैये से बात की, वह अधिकतर नाव लेकर दरिया के मँझधार से गुजरता है। उसे भी पहले व्यक्ति से कही जाने वाली बात कही। वह बेचारा यह सोचकर खुश हो गया कि अब तकदीर बदलने वाली है। फिर इस पार के एक पुराने निवासी को पुरस्कार की बात कहकर मना लिया। नेपाल ने अब संतुष्ट होकर यह सोच लिया कि अब बच्चू गोपाल तो परेशान हो रहा होगा, वह भला किसे राजदरबार में उसके पक्ष में पूछताछ के लिए मना लेगा।

दूसरी ओर गोपाल ने दिमाग लगाया और दरिया के उस पार जाकर देखा कि एक संत–महात्मा

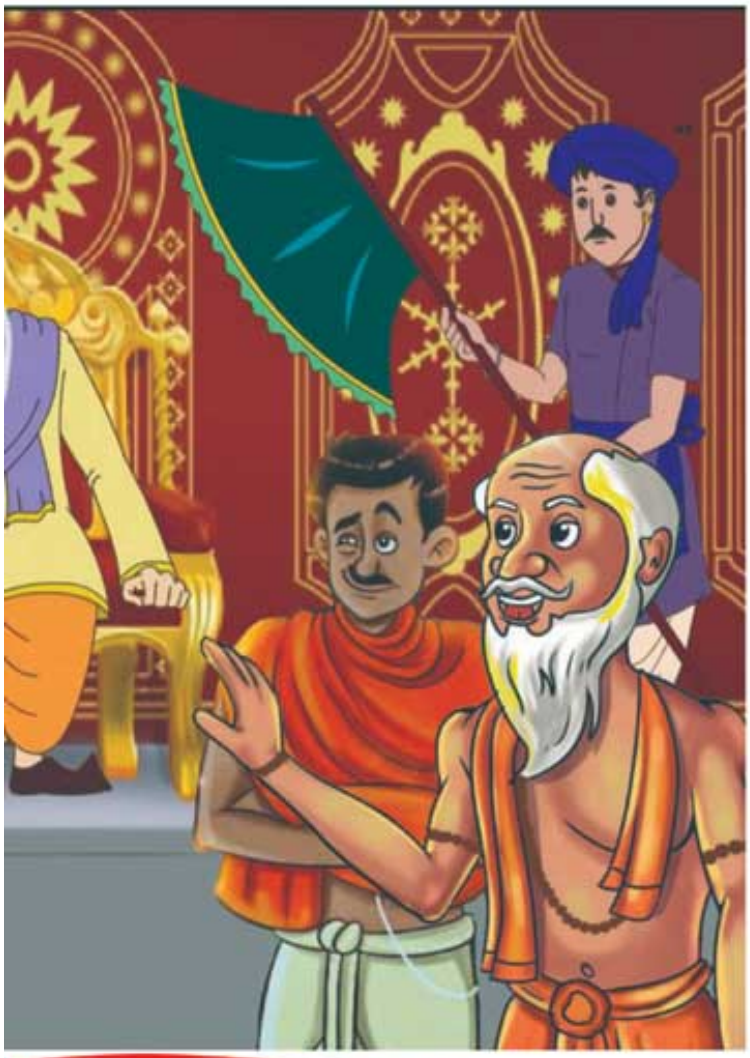

अपनी कुटी में ध्यान लगाए बैठे हैं। उसने उनके बारे में पता लगाया तो यह जानकारी मिली कि वे सचमुच एक संसार विरागी संन्यासी हैं और उन्हें कोई लोभ–लालच नहीं है। साथ ही वे किसी के भले के लिए अपनी सेवा देने को सदा तत्पर रहते हैं। गोपाल ने उन्हें साष्टांग प्रणाम किया और अपनी मुसीबत कह सुनाई। इस पर संन्यासी ने कहा कि– ''मुझ संसार विरागी को क्यों राज दरबार में घसीट रहे हो?'' अंत में बहुत विनती करने पर संन्यासी ने केवल यह कहा– ''मैं दरबार में जा सकता हूँ पर कोई धन या पुरस्कार नहीं लूँगा।'' गोपाल ने बस इतना कहा– ''आप मेरा उद्धार कर दें, आपके दर्शन पाकर मैं धन्य हो गया हूँ।''

अब गोपाल एक पंडित के पास गया। वे अपने यजमानों को यह कह रहे थे– ''आप अगली बार और अधिक लोगों को साथ लाएँ ताकि वे मेरे प्रवचन का लाभ उठा सकें।'' गोपाल ने मन ही मन कहा कि यही वह व्यक्ति है, जिसे वह दरिया के इस पार का सिद्ध करने के लिए ढूँढ रहा है। वह सांसारिक मोह माया में बंधा है। गोपाल ने अपनी बात दोहराई। पंडित जी अपनी प्रसिद्धि के लिए काफी लालायित तो थे ही, अब जब गोपाल ने उन्हें राजदरबार में जाने की बात कही तो वे यह सोचकर प्रसन्न होने लगे कि हो सकता है कि इसी बहाने मुझे राजदरबार में आसन मिल जाए, तब तो मैं अपनी विद्वत्ता के माध्यम से रातोंरात चमक जाऊँगा। उन्होंने गोपाल के प्रस्ताव से प्रसन्न होकर खूब खिलाया–पिलाया भी।

अब गोपाल घूमता–घामता एक साहूकार के पास पहुँचा, जो क्षेत्र में धनवान होने के लिए प्रसिद्ध था। वह ब्याज पर पैसे लगाता था और गरीबों का शोषण करता था। गोपाल ने अपनी बात उनके सामने रखी तो उसने सोचा कि यही एक बात की कमी रह गई थी कि मैं महाराज कृपा दृष्टि में कभी नहीं आया। अब अवसर मिला है, मैं अपने धनवान होने का प्रदर्शन

करूँगा तो महाराज मुझे दरबारी का पद दे देंगे। फिर धीरे-धीरे मंत्री बन जाऊँगा। उसने गोपाल को 'हाँ' कह दी।

निर्धारित तिथि को गोपाल संन्यासी, पंडित और साहूकार को साथ लिए दरबार में पहुँच गया। दूसरी ओर नेपाल भी अपने तीन लोगों के साथ खुशी-खुशी पहुँच गया। वह तो इतना प्रसन्न था कि मानो उसे विजय प्राप्त हो ही गई हो।

चूँकि नेपाल दरबारी भांड था, इसलिए उसे ही पहले अपना पक्ष रखने का अवसर दिया गया। नेपाल ने दरिया के उस पार के एक निवासी को प्रस्तुत करते हुए कहा कि- ''वे सबसे पुराने निवासी हैं और उनकी चौदह पीढ़ी से वहीं के रहने वाले थे। अत: इनसे अधिक प्रमाणित दरिया के उस पार का और कौन हो सकता है।''

फिर दरिया के इस पार के निवासी के लिए एक ऐसे व्यक्ति को प्रस्तुत किया जिसने दरिया के उस पार कभी कदम ही न रखा हो एवं दरिया के मँझधार के लिए उसने एक नाविक को प्रस्तुत किया जो दिन-रात नाव खेता रहता है, नाव में ही सोता जागता है। उसे दरिया के इस और उस पार पर कभी किसी ने देखा हो, ऐसा कहना कठिन था। नेपाल के समर्थन में लगभग सारे दरबारियों ने अपने हाथ उठाकर कहा, ''साधु-साधु'' जिसका अर्थ है शत प्रतिशत सही बात कहीं है नेपाल भांड ने।

महाराज ने इस बार गोपाल की ओर अपना रुख किया। दरबारी तो गोपाल की ओर ऐसे देखने लगे कि गोपाल की हार अब होने ही वाली है। गोपाल ने सबके आगे हाथ जोड़े और अपने स्वभाव-सिद्ध मुस्कान के साथ पहले संन्यासी महाराज को प्रस्तुत किया।

संन्यासी जी ने केवल यह कहा कि- ''यह राजदरबार मेरे लिए कोई अर्थ नहीं रखता, मैं केवल गोपाल के कहने पर आया हूँ, शायद उसका कोई भला हो।'' गोपाल ने केवल यह कहा कि- ''संन्यासी जी को इस भवसागर से कोई मतलब नहीं हैं, वे तो अपने सत्कर्मों के द्वारा भवसागर नामक दरिया के उस पार जा चुके हैं।'' सारे दरबारियों ने ''साधु-साधु'' कहना शुरु कर दिया, वे थमने का नाम ही नहीं ले रहे थे। महाराज ने भी कहा कि दरिया के उस पार रहने वाले सही अर्थों में संन्यासी जी ही हैं।

अब बारी थी दरिया के इस पार के व्यक्ति को प्रस्तुत करने की। गोपाल ने इसके लिए प्रवचन करने वाले पंडित जी को प्रस्तुत किया और कहा कि- ''इन पंडित जी को तो शायद बहुत से लोग जानते ही हैं जो हमेशा प्रसिद्धि पाने के मोह के बंधन में बंधे हुए हैं। ये महाशय दरिया के इस पार के रहें। सबने गोपाल के इस प्रस्ताव की भी भूरि-भूरि प्रशंसा की।

अब अंतिम बारी थी दरिया के मँझधार के व्यक्ति की। इसके लिए गोपाल ने सूदखोर साहूकार को प्रस्तुत करते हुए कहा कि ये महोदय धन के पीछे भाग रहे हैं। इन्हें न तो परलोक की चिंता है और न इस लोक की। ये रहे दरिया के मँझधार के व्यक्ति। इतना कहना था कि सारे दरबारी उठकर खड़े हो गए। कुछ लोग तो गोपाल को कंधे पर उठाकर नाचने भी लग गए।

अब तक नेपाल का चेहरा मुर्झा चुका था। उसने आकर गोपाल के पैर छू लिए और कहा- ''आप मेरे बड़े भाई हैं, इतना ही नहीं, आज से आप मेरे गुरु भी हुए।'' गोपाल ने बिना कोई समय गँवाए नेपाल को अपने गले से लगा लिया। इस शुभ घड़ी में सारा वातावरण मानो सुवासित हो उठा।

महाराज ने गोपाल को पुरस्कृत किया एवं साथ ही उसे भी स्वर्ण मुद्राएँ भेंट में देकर उसकी पीठ थप-थपाई। चारों ओर से 'धन्य है! धन्य है!' की ध्वनि सुनाई देने लगी।

**- गुड़ियाहाटी,**
**कूचबिहार (पं. बंगाल)**

# पहले कैसे!

चित्रकथा: देवांशु वत्स

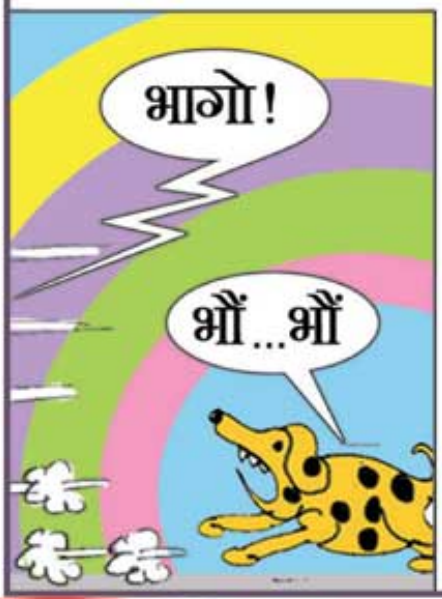


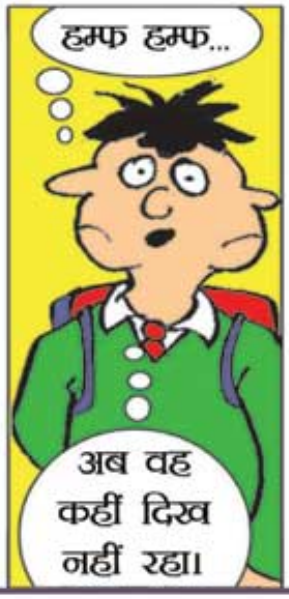

# चप्पल पिघल गई

– रजनीकांत शुक्ल

उत्तरप्रदेश की राजधानी लखनऊ में जब आप जाएँगे तो यहाँ के निवासियों के सौम्य व्यवहार से आप प्रभावित हुए बिना नहीं रहेंगे।

इनकी शिष्टता, मृदुलता का कोई उत्तर नहीं। कहते हैं कि कभी इस शहर की स्थापना भगवान राम के छोटे भाई वीरवर लक्ष्मण ने की थी। उनके नाम से ही रखा गया इसका नाम लक्ष्मणपुरी, लखनपुरी, लखनपुर और अब बदलते–बदलते लखनऊ हो गया है। इसी लखनऊ के डालीगंज के मुशीगंज क्षेत्र के रहने वाले थे विजय कुमार मिश्रा। जिनकी तीन वर्ष दस महीने की बेटी थी पारुल, पारुल मिश्रा।

वह वर्ष १९९९ के दिसम्बर महीने की बाईस तारीख थी और बुधवार का दिन था। उस दिन नन्हीं पारुल अपनी सहेली प्रियंका के साथ उसके घर पर खेल रही थी। प्रियंका के पिता ने अभी–अभी भट्टी पर चावल को भूनकर उसकी राख भट्टी के बाहर रखी थी।

प्रियंका के पास गुड़िया थी उसके पिता ने उसे लाकर दी थी। उसी गुड़िया के साथ खेलने के लिए पारुल मिश्रा उसके घर आई हुई थी जो कि उसके घर के पास में ही था। जिस जगह पर वे दोनों गुड़िया के साथ खेल रहीं थी उस समय उस जगह पर कोई और नहीं था। प्रियंका के पास उसकी गुड़िया तो थी ही। उस गुड़िया की छोटी–छोटी चीजें भी थीं, जो नहीं थीं वे इन दोनों सहेलियों ने मिलकर जुटा लीं थीं। जैसे उसके पहनने के कपड़े उसके छोटे–छोटे बर्तन और उसके बैठने और लेटने की चीजें। पारुल के आते ही प्रियंका उत्साहित हो गई।

प्रियंका ने उससे कहा– ''आओ पारुल! अब हम खेलना शुरु करते हैं। अभी हम अपनी प्यारी गुड़िया के लिए खाना बनाएँगे। तुम तब तक यहाँ सफाई कर लो। हम गुड़िया के बर्तन साफ करके लाते हैं। इतना कहकर प्रियंका उधर बढ़ गई जिधर उसके पिताजी ने चावल भूनकर भट्टी से निकालकर राख डाली थी। प्रियंका का विचार उसी राख से रगड़कर गुड़िया के बर्तन साफ करके चमकाना था। जैसा कि वह अपनी माँ को करते हुए देखा करती थी।

उसे इस बात का बिलकुल भी अंदाजा नहीं था कि वह राख उसके पिता ने अभी–अभी निकालकर रखी है और उस समय वह बहुत गरम थी। वह तो बस खुशी से उछलती हुई राख उठाने के लिए दौड़ी चली आई। दौड़ते हुए एकदम से उसके पैर जब गरम राख पर पड़े तो वह दर्द से बिलबिला उठी।

हड़बड़ी में उसने बचकर वापस लौटने का

प्रयत्न किया तो वह लड़खड़ाकर नीचे गिर गई। जिस राख पर प्रियंका गिरी थी उस राख के अंदर जलते हुए कोयले थे। उस भभकती आग में गिरते ही प्रियंका के गले से चीख निकल गई। जलन के दर्द से उसके मुँह से लगातार चीखें निकलने लगीं।

पारुल अभी सफाई में लगी थी लेकिन जैसे ही उसने प्रियंका की दर्द भरी चीखें सुनी वह प्रियंका को बचाने के लिए उसकी ओर दौड़ पड़ी। गर्म राख पर चप्पल वाल पैर पड़ते ही उसके पैरों में भी जलन हुई किन्तु उसे उस समय इसका भान कहाँ था। दौड़कर प्रियंका के पास पहुँची पारुल ने तुरन्त प्रियंका को राख और कोयलों से ऊपर उठा लिया। नीचे उसके भी पैर जल रहे थे और वह प्रियंका को लेकर चल नहीं सकती थी इसलिए सहायता के लिए चिल्लाने लगी।

पहले प्रियंका की दर्द भरी चीखें फिर पारुल की सहायता के लिए पुकार पड़ोस के एक व्यक्ति रवि के कानों में पड़ी। वह तुरन्त दौड़कर आया और उसने जब पारुल को प्रियंका को गोद में पकड़े देखा तो तुरन्त उन दोनों को उस गर्म राख से बाहर निकाल लिया।

अब तक कुछ और लोग भी वहाँ जमा हो गए। उन्होंने देखा कि दोनों लड़कियाँ बुरी तरह घायल थीं। यहाँ तक कि पारुल की रबड़ की चप्पलें आग की गर्मी से पिघल चुकीं थीं। उन दोनों को शीघ्र ही उपचार के लिए अस्पताल ले जाया गया। जहाँ प्रियंका का चार महीने तक उपचार चला तब वह जाकर ठीक हो सकी।

वहीं पारुल मिश्रा के पैरों में पहनी गईं चप्पलों के पिघल जाने से उसके पैर इतने अधिक जल गए थे जिसके कारण उन पैरों की प्लास्टिक सर्जरी करानी पड़ी।

तीन वर्ष आठ महीने की पारुल ने अपनी बहादुरी से अपनी सहेली प्रियंका की जान बचाई। स्वयं संकट में पड़ गई किन्तु उसने प्रियंका पर आँच न आने दी। नन्हीं पारुल के इस साहसिक कदम से उसकी वीरता पुरस्कार के लिए अनुशंसा की गई।

भारतीय बाल कल्याण परिषद नई दिल्ली ने उसे वर्ष २००० के राष्ट्रीय बाल वीरता पुरस्कार के लिए चुन लिया। अगले वर्ष गणतंत्र दिवस पर पारुल को नई दिल्ली आमंत्रित किया गया।

जहाँ देश के तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी जी ने उसे राष्ट्रीय बाल वीरता पुरस्कार प्रदान किया।

नन्हें मित्रो!

**भले बहुत छोटे हों हम, पर यह है हमें पता।**
**कोशिश गर दिल से पूरी तो, तेरी नहीं खता।**
**बढ़ आगे तू हाथ थाम, अहसां तो नहीं जता।**
**बढ़ते पैर स्वयं देते हैं, मंज़िल हमें बता।।**

**– नई दिल्ली**

एकांकी : सावित्रीबाई फुले जयंती ०३ जनवरी

# पहली पाठशाला

– पद्मा चौगाँवकर

(इस नाटिका को समझने और मंचन करने के लिये, इतिहास के उस कालखंड (वर्ष १८००) की परिस्थितियों के अनुरूप पात्र और उनकी वेशभूषा की तैयारी करनी होगी।)

**मंच**– एक साधारण–सा बड़ा कमरा। एक कुर्सी, एक श्यामपट, एक मेज पार्श्व भित्ती पर दो बड़ी खिड़कियाँ, एक दरवाजा बाहर से प्रवेश। एक दरवाजा बाजू में दूसरे कमरे में जाने के लिये।

**पात्र**– महिला शिक्षिका सावित्रीबाई फुले। आयु १७–१८ वर्ष।

**वेशभूषा**– साधारण–सी नौगजी मराठी साड़ी–ब्लाउज (चोळी)। ऊँचा जूड़ा, सिर पर पल्ला, माथे पर रेखा रूप बिंदी, चूड़ी, छोटा मंगलसूत्र।

**६–७ बालिका छात्राएँ**– ५–६ से ९–१० वर्ष तक आयु वेशभूषा– लम्बा साधारण कम घेर वाला फ्रॉक या साधा–ब्लाउज।

**पहनावा**– कसकर बालों की चोटी, झोलानुमा बस्ते, पाटी (स्लेट), पुस्तकें। टाट के बने आसन बैठने के लिये।

**कुछ शरारती तत्व**।

(छात्राएँ आसनों पर बैठी हैं। मुख्य द्वार से तेजी से सावित्रीबाई का प्रवेश। छात्राएँ खड़ी होकर प्रणाम करती हैं। सावित्रीबाई अपने आँचल से, सिर–बाल और साड़ी पर पड़ी गंदगी पोंछते हुए, छात्राओं को बैठने का संकेत करती हैं।)

**एक छात्रा**– ''क्या हुआ बाईजी ? फिर किसी ने कीचड़ फेंका आप पर? ऐसा क्यों करते हैं ये लोग ?''

**सावित्रीबाई**– ''कुछ नहीं.. ये समाज की गंदी सोच का परिणाम है, तुम परेशान न हो। जानती हो ना, इसीलिये इस थैले में, मैं प्रतिदिन एक साड़ी लेकर आती हूँ। बदलकर अभी आयी। (बाजू के दरवाजे से दूसरे कमरे में जाती है, साड़ी बदलकर आती है।)

(मुख्य द्वार से एक छात्रा का घबराते हुए प्रवेश।)

**सखू**– ''बाईजी! आपको वो लोग आपको.... आपको.. उन्होंने कुछ...''

**सावित्रीबाई**– ''सखू! उनको कुछ भी बकने दो, डरो मत, मुझे कुछ नहीं हुआ। तुम्हें तो तुम्हारे बाबा छोड़ गये ना? बस, अकेली मत आया करो। आओ.... बैठो।

(सावित्रीबाई ड्रावर से रजिस्टर निकालती है,

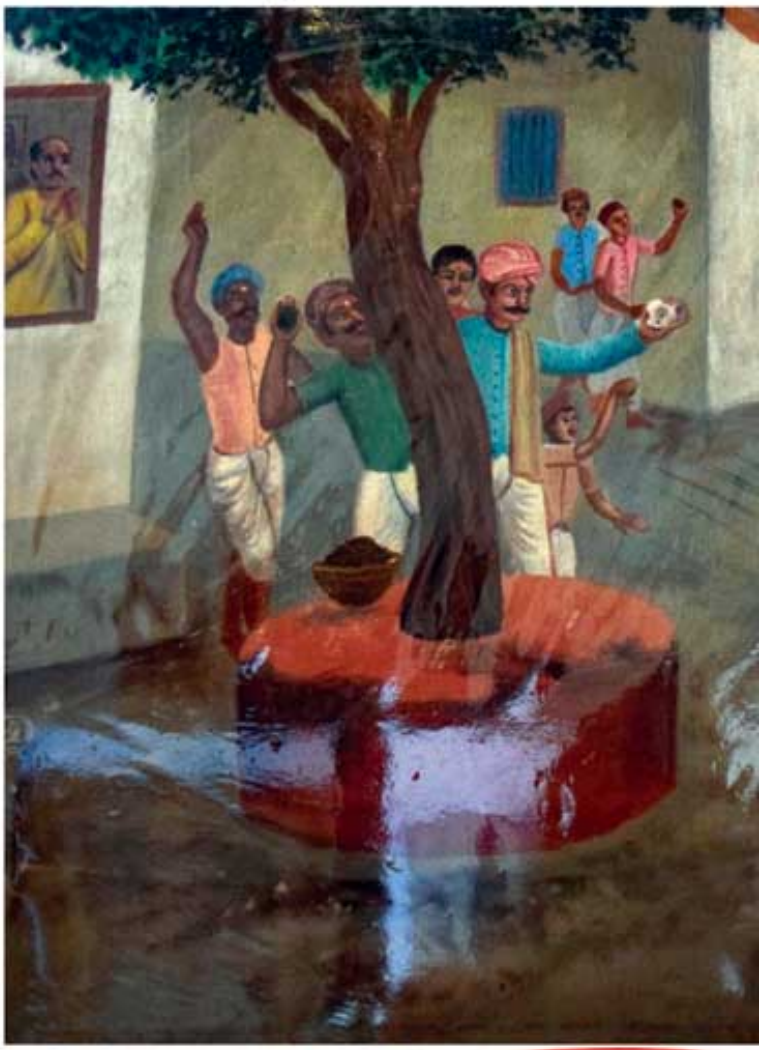

एक छात्रा कपड़े से श्यामपट साफ करती है। सावित्रीबाई रजिस्टर में उपस्थित दर्ज करते हुए।)

**सावित्रीबाई**– ''सुमति कोकाशर, अन्नपूर्णा जोशी, दुर्गा देशमुख....। सखू मेवसे, शांता नरके, जानकी महार... (खड़े होकर सब उपस्थिति बोलती हैं।) और धोंडी तुम ? आज रोई नहीं न ? अब अच्छा लगता है ना पाठशाला आना ? सुनो, तुम्हारा नाम बदलकर मैंने 'सरस्वती' रखा है, अपना यही नाम सुनकर उपस्थिति बोला करना।''

**धोंडी** (उठकर बोलती है)– ''उपस्थिति।''

**सा. बाई**–शाबाश! चलो, अब पाटी–बत्ती निकालो, छोटी बच्चियाँ लिखेंगी।

(सावित्रीबाई एक ही पंक्ति में बैठी बालिकाओं की लिखी पट्टियाँ जांचती हैं, सुधार करती हैं। अक्षर के ऊपर हाथ फेरकर अभ्यास करने हेतु घिस्सा लगाने को अक्षर बनाती हैं।)

(तभी बाहर कुछ शोर होता है।)

**एक लड़का** (खिड़की से झाँककर)– ''देखो–देखो सबको बिगाड़ेगी, आवारा बनाएगी अपनी तरह।''

**कुछ और आवाजें**– ''बंद करो! बंद करो ये पाठशाला! ये सावित्री सिरफिरी है, समाज के लिए कलंक है।

(बाहर कोई शरारती तत्वों को कोई डपटता है– वो भाग जाते हैं।)

(अंदर लड़कियाँ डर जाती हैं।)

**सावित्रीबाई**– ''डरो नहीं बेटियों! अच्छे कामों का, पहले ऐसे ही विरोध होता है। हमें हिम्मत से काम लेना चाहिये– हमारा साथ देने वाले लोग भी हैं।''

''शिक्षा से सबका जीवन सँवर जायेगा, लोग इस बात को देर से समझ पायेंगे! ये तात्या भिडे का बाड़ा ये लड़कियों की शिक्षा का केन्द्र, तुम्हारी उन्नति का रास्ता तय करेगा। शिक्षा ही तुम्हें बल देगी... हमारा निश्चय पक्का हों तो, विरोधी भी कुछ नहीं बिगाड़ सकते।''

**शांता**– ''फिर बाईजी! वे कौन लोग हैं ? हमें पढ़ने देना नहीं चाहते। क्यों नहीं चाहते ?''

**सखू**–''और आपके लिये कितनी बुरी–बुरी बातें कहते हैं! अभी मैं आपके पीछे ही आ रही थी, उनकी बातें सुनकर बापा भी दुखी हुए।''

**सावित्रीबाई**– ''देखो बेटियों हम एकदम नये रास्ते पर चलने के लिए चले हैं। साधनों से हीन जैसे, इस नये रास्ते पर एकदम नंगे पैर चल रहे हैं... जो हमें आगे बढ़ने देना नहीं चाहते... हमारे रास्तों पर कांटे बिछाएँगे, रोड़े अटकाएँगे।

वे नहीं समझते इसमें सबका भला है, हमारा समाज तभी आगे बढ़ेगा, जब देश की बेटी पढ़ेगी,

पढ़ी-लिखी महिलाएँ अपने परिवार का कल्याण करेंगी।

इसीलिये हमें तो इस राह पर चलते रहना है... तभी तो अपनी मंजिल को पा सकेंगी, समझ रही हो... पर अभी इन बातों को तुम क्या समझो!! बस इतना जान लो... मुझे पढ़ाना है, तुम्हें पढ़ना है... अपने ज्योतिबा फुले जी की भी यही जिद और मेरी भी।

**अन्नपूर्णा**- ''जब हम खूब लिख-पढ़ लेंगी, तभी तो सारी बातें समझेगी ना, बाईजी! हम पढ़ना चाहती हैं आपकी तरह बनना चाहती हैं, हम कभी हिम्मत नहीं हारेंगी।''

**सावित्रीबाई**- ''शाबाश! बस हिम्मत मत हारना कभी!''

''सखू! तुम्हें भाषा की पुस्तक मिल गई? निकालो और पाठ पढ़ो, सुमति, भाषा की पुस्तक मिल गई? निकालो और पाठ पढ़ो, सुमति, शांता दोनों कल के शब्द लिखकर बताओ तो? बाकी छोटी बेटियाँ श्यामपट के अक्षर लिखकर घिस्सा लगाओ।'' (सखू बस्ते से भाषा की पुस्तक निकालकर दिखाती है।)

**सखू**- ''ये देखिये पुस्तक बाईजी! बहुत अच्छी है। भवालकर काका स्वयं आकर दे गये थे, मैंने तभी घर पर पढ़ने का प्रयत्न किया था। अपनी वहिनी (भाभी) को दिखाई यह पुस्तक!

मेरे साथ वह भी लिखना-पढ़ना सीखना चाहती है, घर पर मैं ही, जितना मुझे आता है, सिखा देती हूँ। वह पाठशाला नहीं आ सकती ना। पर चाहती हैं पढ़ना।''

**सावित्रीबाई**- ''ये तो बहुत अच्छी बात है, सखू! उनकी लगन बनी रहे और तुम भी उनकी मदद करो।

देखो, मैं भी कहाँ पढ़ी थी, कुछ भी ज्ञान नहीं था- मुझे! पर मेरे पति शेटजी ने मुझे इतना तो पढ़ा दिया कि उतना ज्ञान मैं तुम्हें दे पा रही हूँ...

तुम सब खूब पढ़ना और हो सके तो दूसरों के अज्ञान को भी दूर करता।'' (मासूम लड़कियाँ स्वीकृति में सिर हिलाती है।)

(शून्य में देखते हुए सावित्रीबाई अपने आप से कुछ कहते हुए।) भला हो, उन गोपंडे जी का जो शेटजी (फुले जी) को फरारे मॅडम के विद्यालय में ले गये। फरारे ने मंत्र दिया और शेटजी को 'बालिका शिक्षा' की धुन सवार हो गई! उनकी जिद से मैं शिक्षिका बन गई।

(खिड़की से झांकता एक आदमी चिल्लाकर कहता है।)

**आदमी**- ''हाँ-हाँ शिक्षिका बनी है, देखो ये ज्योति फुले की औरत! पागल, शिक्षिका बनी है.. दलित लड़कियों को ज्ञान बाँट रही है। शर्म करे, शर्म

करो!! हमारी बेटियाँ जैसी हैं वैसी ही रहने दो..... उन्हें बिगाड़ो मत!''

(कक्षा में शांति) (फिर उस व्यक्ति की तेज आवाज।)– ''सुनती नहीं, तो ले!

(गोबर उछालकर फेंकता है, जो लड़कियों और सावित्रीबाई पर गिरता है। सब उसे साफ करने लगते हैं तब तक सटाक से एक पत्थर फेंका जाता है, जो सावित्रीबाई के माथे पर लगता है... चोट से खून रिसता है।

लड़कियाँ डरकर चींखने लगती हैं। सावित्रीबाई, हाथ के संकेत से शांत कर, चोट को हाथ और पल्ले से दबाती है।

कुछ देर शांत रहने के बाद शरारती भाग जाते हैं।)

**सावित्रीबाई** (कुछ सम्हलकर)– ''डरो नहीं बेटियों, हम सारे विरोधों का डटकर सामना करेंगे। जितना हमें रोका जायेगा हम उतनी ही मजबूती से अपना काम करेंगे! पाठशाला कभी बंद नहीं होगी।

समाज ने हमारे लिये कभी नहीं सोचा, जो लोग महिलाओं के लिये सोचते हैं वे हमें सहारा देंगे.. सहायता करेंगे।

और देखना, और भी ऐसे शिक्षा केन्द्र खुलेंगे, जो दलित बेटियों की उन्नति की बात सोचेंगे।

बेटियों, ये चोट तो मामूली है... अभी हमें बहुत कष्ट झेलना है, अपमान सहना है। बस तुम हिम्मत मत हारना.. अपनी शक्ति को पहचानो तुम दुर्गा हो, अन्नपूर्णा हो, सखू और सरस्वती हो... ज्योतिबा जी और भवालकर जी के संकल्पों को पूरा करना है... हमें समाज को बदलना है।''

**लड़कियाँ** (बारी–बारी से) – बाई जी! हम हिम्मत नहीं हारेंगी।

ये पाटियाँ, ये पुस्तकें, हमारे लिये सब कुछ हैं। हमने समझ लिया है, आप और ये विद्यालय ही हमारा जीवन बदलेंगे... और हम बदलेंगी समाज को।

**– गंजबासौदा (म. प्र.)**

शिशुगीत

# कचौड़ी

– राधेश्याम सक्सेना 'रसिकेश'

छोटी–मोटी चौड़ी–चौड़ी,
फूली–फूली फिरे कचौड़ी।
पूरी की यह बहन सगी है,
मुझको अच्छी अधिक लगी है।

मालपुए की यह नानी है,
गुझिया की यह देऊरानी है।
रसगुल्ले की यह चाची है,
खूब कढ़ैया में नाची है।

# सुनहरी महसीर

– डॉ. परशुराम शुक्ल, भोपाल (म. प्र.)

शानदार भारत की मछली, हिम पर्वत की वासी।।
आसपास के देशों में भी, यह मछली मिल जाती।।
तेज धार वाली नदियों में, यह आवास बनाती।
और बड़ी झीलों में भी यह, प्राय: पायी जाती।।
आँखें बड़ी, बड़ा मुँह इसका, रंग सुनहरा पाया।
दो मीटर से अधिक लम्बी, बच्चो! इसकी काया।।
मछली, मेंढक और केकड़े, जो मिलता सो खाती।
पानी के पौधों से भी यह, अपना काम चलाती।।
जीवन लगभग बीस बरस का, कभी नहीं जी पाती।
उपयोगी होने के कारण, यह शिकार हो जाती।।

अरुणाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, जम्मू कश्मीर
और हिमाचल प्रदेश की राजकीय मछली

# छ: अँगुल मुस्कान

**रोगी**– डॉक्टर साहब, मैंने चाबी निगल ली है।
**डॉक्टर**– ऐसा कब हुआ?
**रोगी**– तीन महीने पहले।
**डॉक्टर**– तो अब क्यों आए हो?
**रोगी**– डुप्लीकेट चाबी से काम चला रहा था। वह भी आज खो गई।

*****

**पिताजी**– यदि तुम फिर से परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो गए तो मुझे पिता मत कहना।
परीक्षा के बाद....
**पिताजी**– तुम्हारा परिणाम कहाँ है?
**बेटा**– बाबूलाल जी! आप पिता कहलाने का हक खो चुके हैं।

चोट लगी हालत में अजय अस्पताल पहुँचा।
**डॉक्टर**– नाम और आयु।
**अजय**– नाम अजय, आयु ३० वर्ष।
**डॉक्टर**– विवाहित हो?
**अजय**– हाँ, पर ये चोट मुझे दुर्घटना में लगी है।

*****

**अध्यापक**– अरे राजू! तुम तो कमाल के लड़के हो।
**राजू**– नहीं सर! यह गलत है। मैं तो हीरालाल का लड़का हूँ।

*****

**डॉक्टर**– माताजी, मैं आपको ऐसी दवा दूँगा जिसे खाकर आप १० वर्ष पहले जैसी हो जाओगी।
**माताजी**– न बेटा! ऐसा मत करना, वर्ना मेरी पेंशन बंद हो जाएगी।

# सूर्य नमस्कार

– पवन पहाड़िया

सूरज यदि उदय नहीं होता
कब जगते हम कितना सोते ?
कैसे चिड़िया चहचह करतीं ?
कैसे फिर रात–दिवस होते ?
कब शाला बंद होती–खुलती
कौन हमें बतलाने आता ?
कैसे होती गर्मी–सर्दी ?
कैसे यह जग ऊर्जा पाता ?
बिन ऊर्जा के बादल पानी
कैसे लाते क्या बरसाते ?
कैसे कोई खेती करता ?
कैसे हम सब भूख मिटाते ?
बिन पानी के हम क्या पीते ?
बिजली कैसे पैदा होती ?
कैसी नदियाँ ? बाँध कहाँ पर ?
कहाँ समंदर ? कैसे मोती ?

अत: सूर्य ही जग का पालक
सबको ही यह ऊर्जा देता ?
जीवनदाता है हम सबका
कभी नहीं कुछ हमसे लेता ?
नित्य सूर्य को प्रात: समय में
नमस्कार करना मत भूलो।
चाहो जितनी ताजी ऊर्जा
लेकर नीलगगन तक छू लो।।

– डेह (राजस्थान)

कहानी

# मकर संक्रांति की मस्ती

– नीतिश कुमार

हर्ष और सीमा देहरादून में साईकिलिंग का पूरा आनंद ले रहे थे। उन्हें यहाँ घूमने में बड़ा आनंद आ रहा था। चारों ओर पर्वतों और हरियाली से घिरा होने के कारण दोनों भाई–बहन खूब इधर–उधर घूम रहे थे। उन्हें बिल्कुल भी ठंड नहीं लग रही थी।

तभी माँ के बार–बार जगाने पर हर्ष की नींद खुली। नींद से जगने पर उसे माँ पर बड़ा गुस्सा आया। अभी तो उसने देहरादून घूमना प्रारंभ किया था। बिस्तर पर ऊँघते हुए उसने माँ से कहा।

तब तक सीमा भी हर्ष के पास आ गई। मकर संक्रांति तो कल है और सब कल ही घूमने के लिए तपोवन जा रहे हैं, तो अभी वह सपने में ठंड वाली जगह देहरादून में कैसे घूम रहा था? उसने मुस्कुराते हुए हर्ष से पूछा। हर्ष बिस्तर से उठकर अपने सपने के बारे में सबको बताने लगा।

कल मकर संक्रांति थी। पिताजी ने कल मकर संक्रांति मनाने के साथ ही साथ वनोत्सव मनाने का कार्यक्रम भी तपोवन में रखा था। हर्ष, सीमा, माँ–पिताजी, दादा–दादी सभी कुछ दिनों से इसी की तैयारियाँ कर रहे थे और इसी के बारे में घर पर हमेशा बातें होती थी।

हर्ष और सीमा की आयु में ४ वर्ष का अंतर था। हर्ष जहाँ ८ वर्ष का था, वहीं सीमा ४ वर्ष की थी। दोनों भाई–बहन में ऐसे तो बहुत बनती थी, परन्तु कभी–कभी दोनों झगड़ पड़ते थे। हर्ष को लगता कि वह बड़ा भाई है, इसलिए उसे हर क्षेत्र की बहुत अधिक जानकारियाँ हैं। वह अपनी बहन सीमा पर रौब भी खूब दिखाता।

दोनों भाई–बहन तपोवन घूमने के नाम पर बहुत उत्साहित थे। घर में सबसे अधिक तैयारियाँ इन्हीं दोनों ने की थी। सुबह–सुबह उठकर सभी ने स्नान कर दही–चूड़ा, तिलकुट, और तिल के लड्डू खाए। खाना खाने के बाद सभी तपोवन के लिए निकल पड़े। हर्ष ने पतंगें अपने साथ रख ली थीं।

इसके बाद हर्ष पतंग लेकर उड़ाने लगा। सीमा उसे पतंग उड़ाते हुए देखकर प्रसन्न हो रही थी। घर से बाहर इतने बड़े खुले स्थान में आकर खेलना और पतंग उड़ाने की बात ही कुछ और थी। हर बार की तरह हर्ष, सीमा को इधर–उधर की बहुत सी जानकारियाँ दे रहा था। उन जानकारियों में खेल, पढ़ाई, सिनेमा सब कुछ था।

अचानक उड़ते हुए पतंग को देखते–देखते सीमा का ध्यान दूर पेड़ की टहनी पर बैठ हुए एक बंदर पर गया। बंदर को देखकर वह डर गई और उसने हर्ष का ध्यान बंदर की ओर किया। बंदर को देखकर हर्ष

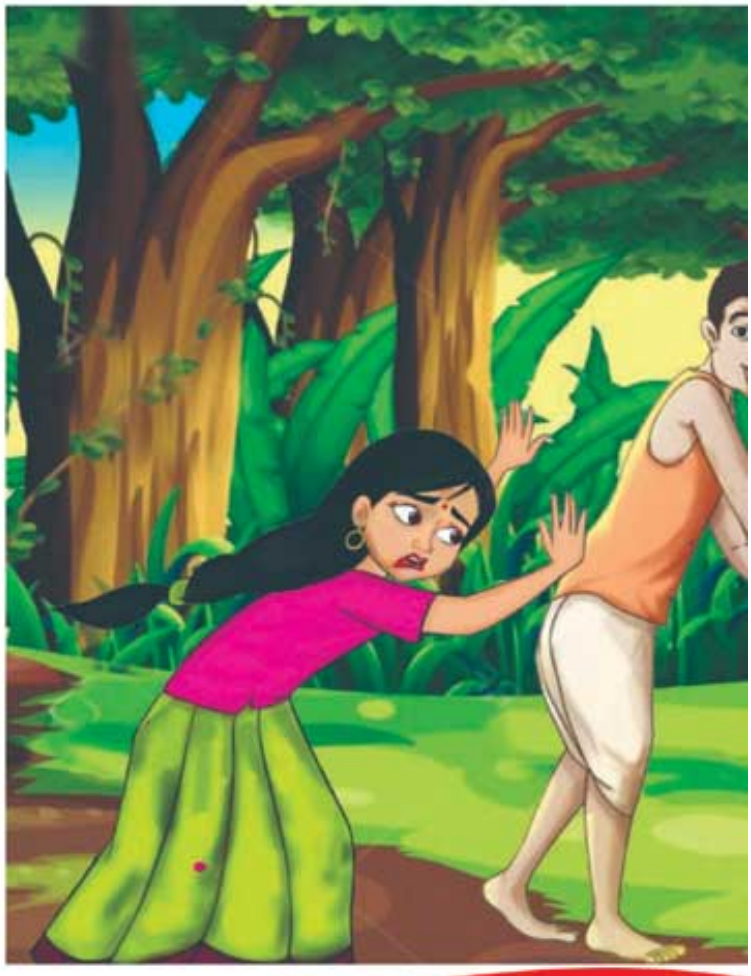

प्रसन्न हो गया। उसने अपनी पतंग समेट ली और सीमा को लेकर वह कौतूहलवश पेड़ के पास गया।

सीमा को बंदर की कलाकारी दिखाने के लिए हर्ष के मन में एक योजना आई। उसने जेब में रखी हुई एक टॉफी को निकालकर बंदर को दिखाया। सीमा ने उसे ऐसा करने से मना किया। उसे बंदर को देखकर डर लग रहा था, लेकिन बंदर को चिढ़ाने में हर्ष को आनंद आ रहा था।

उसने टॉफी को बंदर की ओर देखकर उछाल दिया। बंदर टॉफी पकड़ने में असफल रहा और टॉफी पत्तों की झुरमुट में जाकर गिर गई। बंदर अब सतर्क हो गया और वह दोनों के काफी पास आ गया। बंदर के हाव-भाव देखकर सीमा डर गई और उसने हर्ष को वहाँ से चलने के लिए कहा। लेकिन हर्ष नहीं माना और उसने जेब से फिर एक टॉफी निकालकर बंदर को देने

का प्रयास किया। बंदर इस बार पूरी तरह सतर्क था। उसने हर्ष को जोर से झपट्टा दिया और उसके हाथ से टॉफी छीनकर भाग गया।

जोरदार झपट्टा लगने से हर्ष की स्थिति खराब हो गई और वह जोर-जोर से रोने लगा। भाई को रोते देखकर सीमा भी जोर-जोर से रोने लगी।

रोने की आवाज सुनकर सभी का ध्यान दोनों की ओर गया। पिताजी और दादाजी दौड़कर दोनों के पास आए। सीमा ने रोते हुए उन्हें पूरी बात बताई। पूरी बात सुनकर पिता हर्ष को डॉटने लगे। दादाजी ने पिता को शांत कराया और दोनों भाई-बहन को अपने साथ लेकर पास की चट्टान पर बैठे।

उन्होंने फिर हर्ष को समझाया कि अभी वे दोनों बहुत छोटे हैं। उन दोनों को किसी भी जंगली जानवर या किसी अंजान व्यक्ति को भी भूल से नहीं छेड़ना चाहिए। अन्यथा वे किसी बड़ी समस्या में पड़ सकते हैं। सीमा ने तब दादाजी से कहा कि उसने भैया को समझाया था कि वह बंदर के पास न जाए, परन्तु बहादुरी दिखाने के चक्कर में अपने साथ मुझे भी उसने फसा दिया था।

उसकी बातें सुनकर हर्ष, दादाजी के सामने बुरी तरह से झेंप गया। उसे पता था कि सीमा पर अपनी बहादुरी का रौब दिखाने के लिए ही वह बंदर से छेड़खानी कर रहा था, जिससे उन दोनों को गंभीर चोट भी लग सकती थी।

गलती का अनुमान होने पर हर्ष ने बिना किसी संकोच के अपनी प्यारी बहन से क्षमा माँग ली। उसने दादाजी को भी वचन दिया कि अब वह सीमा पर कभी अपना रौब नहीं दिखायेगा और साथ ही साथ वह किसी भी जंगली जानवर या किसी अंजान व्यक्ति को भी भूल से नहीं छेड़ेगा। हर्ष की वैसे भी दादाजी और सीमा से खूब बनती थी। इसलिए उन दोनों ने झट से उसे क्षमा कर दिया और फिर हर्ष दोनों को अपनी पतंग उड़ा कर दिखाने लगा।

बाल साहित्य की धरोहर

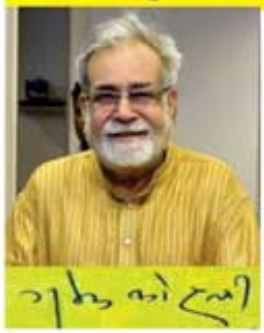

# नए युग के तुलसीदास : डॉ. नरेन्द्र कोहली

प्रस्तोता – डॉ. नागेश पांडेय 'संजय'

प्यारे बच्चो!

हिन्दी के महान रचनाधर्मी पद्मश्री डॉ. नरेंद्र कोहली (६ जनवरी, १९४०–१७ अप्रैल २०२१) ने लोकप्रिय रोचक साहित्य लिखा। उनका जन्म अखंड भारत के सियालकोट में परमानन्द कोहली और विद्यावंती कोहली के पुत्र के रूप में हुआ था। देश विभाजन के बाद सियालकोट पाकिस्तान का भाग हो गया। उनकी संस्मरणात्मक पुस्तक 'सियालकोट जो कभी सागलकोट था' में उनके बाल जीवन के संस्मरण भी हैं। वे बचपन से ही लेखन में रूचि रखते थे। वे कहते भी थे कि लेखक बनाए नहीं जाते, बल्कि पैदा होते हैं। वे कक्षा छः में पढ़ते थे तभी उनकी रचना प्रकाशित हो गयी थी।

वे लगभग साठ वर्षों तक साहित्य सृजन के क्षेत्र में सक्रिय रहे। उन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय से हिंदी में एम. ए. और पी–एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। वे इसी विश्वविद्यालय के अंतर्गत मोतीलाल नेहरु कॉलेज में प्राध्यापक रहे। लेखन के प्रति उनका अथाह समर्पण था, इसीलिए उन्होंने सेवा निवृत्ति से पूर्व ही अवकाश लेकर पूर्णकालिक लेखन को अपना कर्म बना लिया। कोहली जी की मान्यता थी कि जब मन में विचार आए, तभी लेखन करना चाहिए। जबरदस्ती लिखने से लेखक–लेखक नहीं रहता, बल्कि पत्रकार हो जाता है। उन्होंने सौ से अधिक श्रेष्ठ पुस्तकों की भेंट साहित्य जगत को की है। उन्हें नए युग का तुलसीदास कह सकते हैं क्योंकि समकालीन साहित्य जगत में उनकी तरह रामकथा का इतना सरल और सुंदर वर्णन किसी ने नहीं किया। बड़ों के लिए लिखी उनकी पुस्तकें **महासमर**, **तोड़ो कारा तोड़ो** और **रामकथा** (दीक्षा, अवसर, संघर्ष की ओर एवं युद्ध इन चार खंडों में) अनेक भागों में प्रकाशित और बहुचर्चित हुईं।

डॉ. नरेन्द्र कोहली का बाल साहित्य नए युग के बच्चों का साहित्य है। बच्चों के लिए भी उनकी अनेक पुस्तकें हैं। गणित का प्रश्न, आसान रास्ता, एक दिन मथुरा में, हम सब का घर, तुम अभी बच्चे हो, समाधान, कुकुर तथा अन्य कहानियाँ। वे बच्चों को मुखर और प्रखर बनाना चाहते थे। उनका लक्ष्य था कि बच्चे आधुनिक युग की चुनौतियों का सामना करने के योग्य बन सकें। वे बच्चों में तर्क और चिंतनशीलता के पक्षधर थे।

यहाँ प्रस्तुत उनकी यह रचना एकदम अलग अंदाज की किशोर कहानी है, जिसको पढ़कर आपको आनंद तो आएगा ही, चिंतन और मनोरंजन के ढेर सारे द्वार भी एक साथ खुल पड़ेंगे।

कहानी

## क्या घर क्या विद्यालय

है तो सब कुछ हमारा, लेकिन हमारे लिए नहीं है घर हो या विद्यालय, बड़ों का हस्तक्षेप हर जगह बना रहता है।

पिताजी ने मुझे और भैया को बैठाकर बड़े प्यार से कहा था– ''बेटा यह घर हमारा है हम सबका। जितना मेरा, उतना ही तुम्हारा, उतना ही भैया का उतना ही माँ का हम सबको मिलकर इसे चलाना है।''

मैं प्रसन्न हो गया, आज तक तो मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था कि कभी इतना बड़ा घर मेरा हो जाएगा। पर अब पिताजी कह रहे थे तो ठीक ही कह रहे होंगे। हमारे घर में माना तो यही जाता है कि बड़े सदा सच बोलते हैं और बच्चे सदा झूठ। पिताजी कितनी ही बार मुझे टोक दिया करते हैं ''झूठ मत बोलो। सच बोलो।'' मैं तो आज तक कभी उनको ऐसी बात नहीं कह पाया।

किन्तु फिर मेरा ध्यान इस ओर गया कि घर तो

हम सबका एक समान था, पर फिर पिताजी ने कैसे इतना स्थान घेर रखा था? कैसे इतनी अधिक चीजें हथिया रखी थीं? उनका सोने का कमरा अलग था, पढ़ने का अलग! ड्राइंगरूम भी उनके ही मित्रों के बैठने के लिए था। हम ड्राइंगरूम में बैठे भी हों, तो उनके आ जाने पर हमें वहाँ से उठ जाना पड़ता था।...

मुझे तो भैया के कमरे में ही ठूंस दिया गया था। माँ कहती थीं कि वह हम दोनों भाइयों का कमरा था, किन्तु भैया तो उसे अपना ही कमरा मानता था। मैं जैसे बिना कसी अधिकार के उसमें रहता था। हम दोनों भाई उसी में सोते और उसी में पढ़ते हैं। अपने मित्रों को भी उसी कमरे में बैठाते हैं। पिताजी के पास कपड़ों के लिए अच्छी अलमारी है, पुस्तकों के लिए अलग, फाइलों के लिए अलग। हम दोनों भाई एक ही अलमारी में कपड़े टाँगते हैं और पुस्तकों के लिए तो हमारे पास अलमारी है ही नहीं। पिताजी के पास कार भी है और स्कूटर भी और मेरे पास भैया के लिए खरीदी हुई एक पुरानी साइकिल, जिसके पहियों में कभी हवा ही नहीं होती...

फिर भी मैं पिताजी की घोषणा सुनकर प्रसन्न हो गया। जब पिताजी कह रहे हैं, तो ठीक ही कह रहे होंगे, मैं कोई 'बड़ा' तो हूँ नहीं कि दूसरों का विश्वास न करूँ।

कल ही मैंने नए जूते खरीदे थे और उसके साथ ही दुकानदार ने एक बड़ा सुंदर कैलेंडर भी दिया था, उस पर बड़े-से आकार का एक रंग-बिरंगा जूता बना हुआ था, जैसे फुटबॉल के खिलाड़ी पहनते हैं। मुझे वह कैलेंडर बहुत ही भा गया था। मैं उसे किसी प्रमुख स्थान पर टाँगना चाहता था- जहाँ आने-जाने वाले प्रत्येक व्यक्ति की दृष्टि उस पर पड़े। अब पिताजी कह रहे थे कि यह घर मेरा भी है, तो मैं अपनी पसंद का कैलेंडर ड्राइंगरूम में टाँगना चाहूँगा।

मैंने एक कुर्सी घसीट ली और उस पर खड़ा होकर कैलेंडर टाँगने के लिए दीवार में एक कील ठोकने लगा।

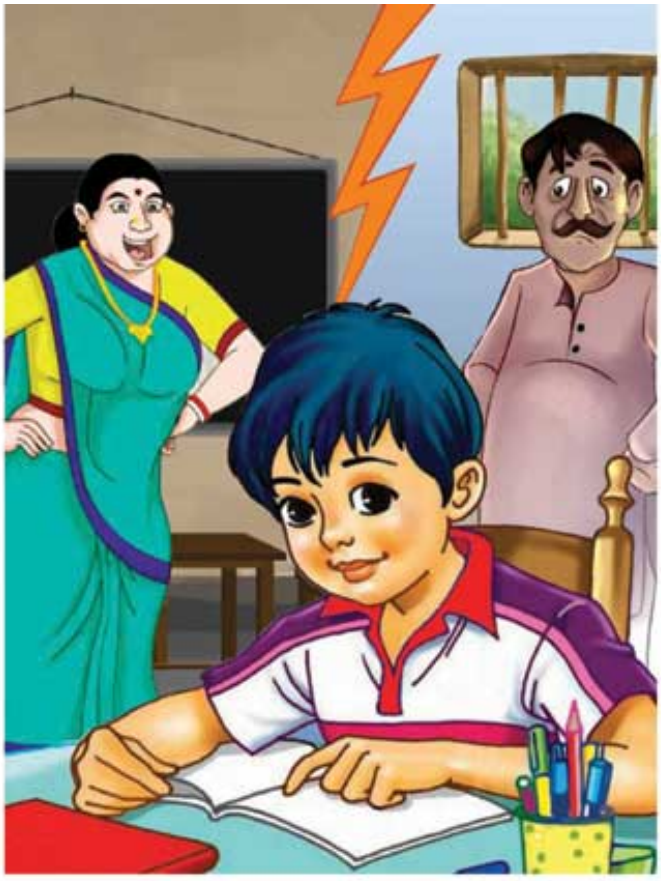

पिताजी अपने कमरे से बाहर आ गए- ''क्या कर रहे हो?''

''कैलेंडर टाँग रहा हूँ।'' मैंने अत्यंत निर्भीक स्वर में कहा। किसी दूसरे के बगीचे के फूल तो तोड़ नहीं रहा था कि उनसे डर जाता।

''कौन-सा कैलेंडर?'' मुझे उनका प्रश्न अच्छा नहीं लगा। उनको पूछताछ की बुरी आदत है। वे इतने अधिक प्रश्न करते हैं, जितने प्राचार्य से मिलने जाओ तो उनका चपरासी करता है। फिर भी मैंने उन्हें कैलेंडर दिखा दिया। पिताजी ने बुरा-सा मुँह बनाया।

''यह कैलेंडर क्या ड्राइंगरूम में टाँगने योग्य है?'' उनकी त्योरियाँ चढ़ गईं थीं।

मैं तत्काल पूछना चाहता था कि कला के नाम पर उन्होंने जो एक भूत का चित्र टाँग रखा था, वह क्या ड्राइंगरूम में टाँगने योग्य था... पर मैंने पूछा नहीं, मैं अपने अनुभव से जानता हूँ कि बच्चों के प्रश्न बड़ों की समझ में अपराध हैं। ''यह घर मेरा है या नहीं?'' मैंने अपने सबसे शक्तिशाली हथियार का प्रयोग किया।

''घर तुम्हारा अवश्य है, पर मैं तुम्हें उसे मोची का घर नहीं बनाने दूँगा।'' वे बहुत दृढ़ता से बोले।

तो जूते के चित्र वाला कैलेंडर टाँगने से यह मोची का घर हो जाएगा... मेरी दृष्टि उस पेंटिंग पर गई जो पिताजी बड़े शौक से खरीद कर लाए थे और बड़े चाव से अपने मित्रों को दिखाया करते थे। उसे पेंटिंग के कारण यह घर कभी किसी चिड़ीमार का घर नहीं कहा गया, तो जूते...।

मैं समझ गया कि घर मेरा अवश्य है, किन्तु इस पर कब्जा पिता जी का ही रहेगा। इतिहास में हमें पढ़ाया जाता है न कि देश तो हमारा ही था, किन्तु उस पर कब्जा अंग्रेजों का था। हमें चाहकर भी अपने अधिकार नहीं मिलते थे, क्योंकि हम एक पराधीन देश के निवासी थे। शायद मैं भी एक पराधीन परिवार का सदस्य था...

ऐसा ही है हमारा विद्यालय भी। पहली कक्षा से लेकर आज तक जाने कितनी बार हमें बताया गया कि यह विद्यालय हमारा भी है। बरामदों में बड़े-बड़े अक्षरों में पेंट करके लगाया गया- 'यह विद्यालय आपका है, कृपया इसे साफ रखें।' मैं अध्यापकों की चालाकी खूब समझता हूँ साफ करने के लिए विद्यालय हमारा है... और आज्ञाएँ देने के लिए उनका। हमारा विद्यालय, तो छोड़ दें हम पर गंदा रखें या साफ रखें, आप टांग अड़ाने वाले कौन हो? अरे! इस विद्यालय से तो अधिक बाहर की सड़के हमारी अपनी हैं जहाँ हम केले के छिलके फेंक सकते हैं, इच्छानुसार गड्ढे खोद सकते हैं और मनमाने ढंग से उन पर थूक सकते हैं।

विद्यालय में तो इतना पक्षपात है कि जिसका कोई अंत नहीं। यह विद्यालय हमारा भी है और हमारे अध्यापकों का भी। जो कुछ हमसे बन पड़ता है, हम अपने विद्यालय के लिए करते हैं... और जो अध्यापकों से बन पड़ता हैं, वे करते हैं। हम तो विद्यालय का नाम ऊँचा करने के लिए विद्यालय में भी पढ़ते हैं और घर जाकर गृहकार्य भी करते हैं। फिर भी हममें और उनमें अधिकारों का कितना अंतर हैं। हम लोग प्रतिमास विद्यालय को शुल्क देते हैं, अध्यापक विद्यालय से वेतन लेते हैं, हम शुल्क न दें तो हमारा नाम कट जाता है। अध्यापक वेतन न लें, तो उनका नाम कोई नहीं काटता...

मुझे कई बार लगता है कि सदा हमें ही अध्यापकों के आदर्श पर नहीं चलना चाहिए। कभी-कभी उन्हें भी हमारे आदर्श पर चलना चाहिए। यदि हमारे ही आदर्श पर चलकर वे भी विद्यालय से वेतन लेने के स्थान पर उसे शुल्क देते, तो हमारा विद्यालय भी अमरीका और जापान के समान धनी हो जाता.. पर शायद हमारा और उनका संबंध भी भारतीय और अंग्रेजों जैसा ही है। देश दोनों का था- अंग्रेजों का लूटने के लिए और भारतीयों का लुटने के लिए।

मुझे अपनी कक्षा की हस्तलिखित पत्रिका का संपादक बनाया गया था.. वह हमारी अपनी पत्रिका थी। हमें उसके लिए रचनाएँ तैयार करनी थीं, उन्हें साफ, स्पष्ट और सुंदर अक्षरों में लिखना था। उस पर जिल्द चढ़ानी थी... और फिर स्वयं हमें ही पढ़ना था। किन्तु फिर भी प्रतिदिन ही हमारी कक्षा टीचर श्रीमती चोपड़ा कहतीं- ''अगस्त्य! पत्रिका के लिए आयी रचनाएँ दिखाओ।''

पूछने का मन होता कि 'क्यों दिखाऊँ?' किन्तु जानता था, यह पूछने का अधिकार मुझे नहीं है, प्रतिदिन आई रचनाएँ उन्हें दिखाता, उन्हें एक भी रचना पसंद नहीं आती थी। प्रतिदिन उनमें परिवर्तन करने के लिए कोई-न-कोई आदेश मिल जाता था। अंत में जब मैं अपनी ओर से सारी रचनाएँ ठीक-ठीक कर संपादकीय लिखकर ले गया तो वे अड़ गयीं ''यह संपादकीय नहीं जाएगा।''

''क्यों मैडम? क्या संपादक मैं नहीं हूँ?''

''संपादक तो तुम ही हो!'' वे बोलीं, ''किन्तु संपादकीय मैं लिखूँगी...'' मैं समझ गया कि पत्रिका तो हमारी ही थी, जैसे घर हमारा था, विद्यालय हमारा था, किन्तु संपादकीय...!!

**- शाहजहाँपुर (उ. प्र.)**

# संतो का सपना

– टीकम चन्दर ढोडरिया

आओ बच्चो! आज तुमको एक ऐसी कहानी सुनाता हूँ, जिसमें मैं भी कहीं न कहीं जुड़ा हुआ हूँ।

कुछ दिन पहले न्यायालय में मैं एक केस की पैरवी कर रहा था। उसमें गवाही देने पुलिस अधीक्षक आयी हुई थीं। लगभग पचास वर्ष की महिला थी। उसकी वर्दी पर मेरी दृष्टि गई तो उस पर संतोष वर्मा नाम लिखा हुआ था। नाम मुझे कुछ जाना पहचाना–सा लगा। गवाही देने के पश्चात बाहर आकर मैंने उनसे पूछा– ''आपका बचपन कहीं विजय नगर में तो नहीं बीता?''

उन्होंने कहा– ''हाँ मैंने सैकेंड्री वहीं से की थी। हम पाँच वर्ष वहीं रहे थे।''

''क्या दर्जी मोहल्ले...ढपोले में?'' मैंने पूछा। उन्होंने अपना सिर हिलाकर कहा। ''हाँ पर... आप कैसे जानते हैं?''

मैंने कहा– ''आप बचपन की सन्तो हैं ना?''

''हाँ मैं वही हूँ।'' उन्होंने मुस्काते हुए कहा।

मैंने अपना परिचय दिया बहुत सारी बातें हुईं।

बच्चों बचपन का सारा दृश्य चल–चित्र की भाँति मेरी आँखों के सामने से गुजरने लगा।

हमारा छोटा सा कस्बा था। जिसमें छोटे–छोटे मोहल्ले हुआ करते थे। हमारे मोहल्ले में दो गलियाँ थीं। जिसमें भिन्न–भिन्न जातियों के कच्चे–पक्के घर बने हुए थे। बीच में छोटा–सा चौक था, जिसमें एक कुआँ बना हुआ था। वही स्थान हम बच्चों के खेलने का मैदान था।

हमारे मोहल्ले के दो नाम थे। सात–आठ घर दर्जियों के होने के कारण उसे दर्जी मोहल्ला कहते थे। उसमें बाजार से प्रवेश करने का स्थान, आस–पास दोनों मकानों से ढँका होने से उसे ढपोला भी बोलते थे।

हाँ तो बच्चो! हमारे मोहल्ले में एक परिवार किराये से रहने आया। उनके दो छोटी–छोटी सुन्दर लड़कियाँ थीं। बड़ी कक्षा आठवीं में छोटी वाली पाँचवीं में पढ़ती थी। घर की आर्थिक स्थिति अधिक ठीक नहीं थी। उनके पिता पुलिस विभाग में वाहन चालक थे। पुलिस उपअधीक्षक की जीप चलाते थे। जैसे–तैसे परिवार का खर्चा चल पाता था।

बड़ी लड़की जिसका नाम संतोष था। उसे सब सन्तो के नाम से बुलाते थे। वह पढ़ाई में सदा अच्छे अकों से उत्तीर्ण होती थी। सब बच्चे खेल–खेल में एक–दूसरे से पूछते थे कि– ''तुम बड़े होकर क्या बनोगे?'' तो वह हमेशा कहती थीं कि– ''मैं तो पुलिस में एस. पी. बनूँगी।''

कुछ वर्षों तक उनका परिवार उस मोहल्ले में रहा। फिर सन्तो के पिता का स्थानांतरण हो जाने से वे दूसरे शहर चले गये।

वर्षों बीत गये। सन्तो से सन्तोष वर्मा बनी पुलिस अधीक्षक मेरे समक्ष खड़ी थी। उसनें अपनी लगन और कठिन परिश्रम से अपने बचपन का सपना साकार किया था। तो बच्चों तुम भी बड़ा सपना देखो और आज से ही उसे पूरा करने में लग जाओ।

– छबड़ा (राजस्थान)

बच्चो! भारतीय संस्कृति का एक अमूल महाग्रंथ है 'महाभारत'। इस महान ग्रंथ के रचयिता महर्षि वेदव्यास हैं। वैसे तो यह बहुत बड़ा ग्रंथ है किन्तु इसकी चयनित कुछ कथाओं को अत्यंत सरल बनाकर प्रस्तुत किया है बाड़मेर राजस्थान के विद्वान लेखक **श्री. मोहनलाल जी जोशी** ने। इस अंक से आपके लिए इस नए स्तंभ में महाभारत की प्रमुख कथाएँ धारावाहिक रूप में प्रस्तुत की जाएँगी। **– संपादक**

# (१) नैमिषारण्य में कथा वाचन

एक ऋषि थे। उनका नाम शौनक जी था। उनका आश्रम नैमिषारण्य में था। वे उसके कुलपति थे।

एक बार वहाँ पर इठ्यासी हजार ऋषि एकत्रित हुए। वे सभी वहाँ पर ज्ञान की साधना कर रहे थे। वे बारह वर्षों तक वहाँ रहने वाले थे।

एक दिन वहाँ सूत पुत्र उग्रश्रवा जी आये। वे बहुत अच्छे वक्ता थे, कथाएँ सुनाते थे। सभी ऋषि उनको घेर कर बैठ गए। ऋषियों ने उनसे महाभारत की कथा सुनाने के लिये कहा।

उग्रश्रवा जी ने कहा– ''मैं बहुत से तीर्थ स्थान घूमकर आया हूँ। मैं कुरुक्षेत्र भी गया था। वही पर कौरवों और पाण्डवों का युद्ध हुआ था। वहाँ पर लाखों सैनिक मारे गये थे।

मैं तुम्हें महाभारत की कथा सुनाऊँगा। तुम सभी अपने–अपने आसन पर बैठ जाओ।''

इस प्रकार सूत पुत्र उग्रश्रवा जी ने नैमिषारण्य में महाभारत की कथा का पाठ प्रारंभ किया।

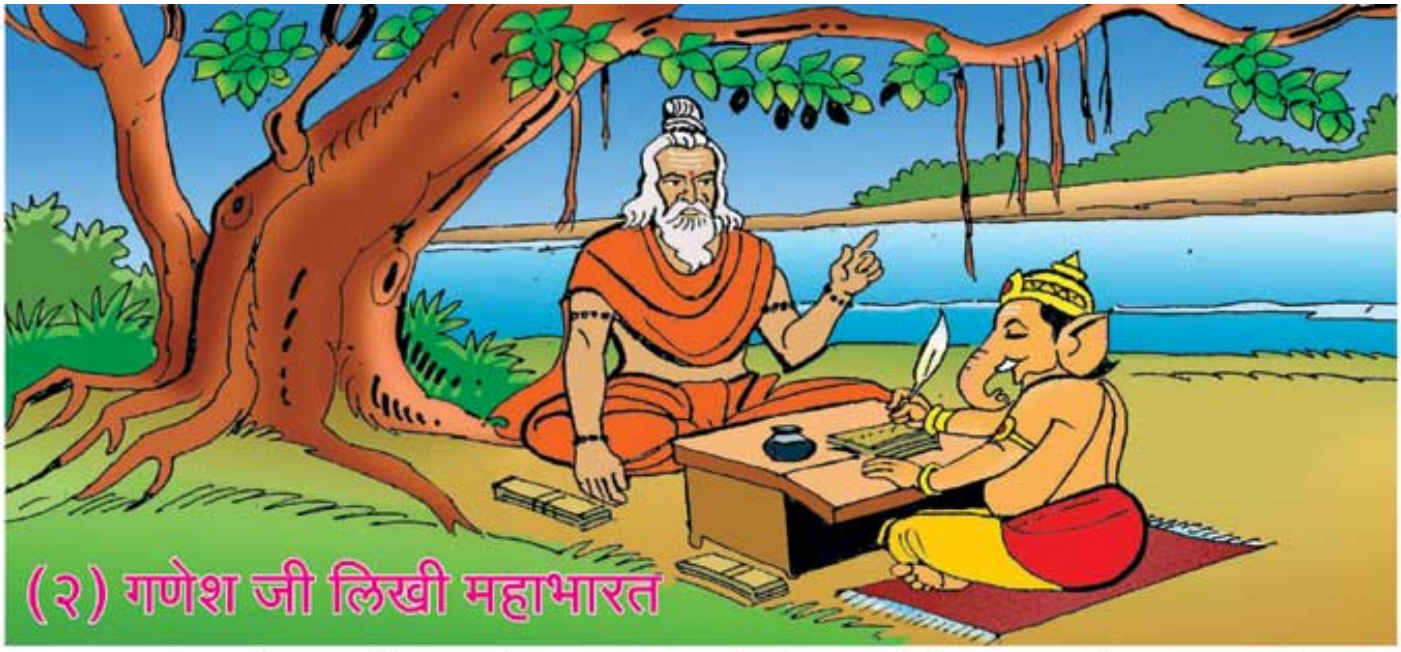

# (२) गणेश जी लिखी महाभारत

उग्रश्रवा जी ने कहा– ''भगवान वेदव्यास मंत्र दृष्टा थे। वेदव्यास जी ने महाभारत के एक लाख श्लोक बना दिये। एक बार वेदव्यास जी सोच रहे थे। मैंने महाभारत की रचना कर ली है। इतने बड़े महाकाव्य को कौन लिखेगा। तभी वहाँ पर ब्रह्मा जी प्रकट हो गये। ब्रह्मा जी ने कहा– ''अरे! चिन्ता क्या करते हो। तुम्हारा काम तो गणेश भगवान कर देंगे।'' वेदव्यास जी ने गणेश भगवान का स्मरण किया। स्मरण करते ही गणेश जी आ गए। वेदव्यास जी ने कहा– ''मैं महाकाव्य के श्लोक बोलता हूँ। आप लेखनी लो और लिखना प्रारम्भ करो। लिखते–लिखते एक बार भी रूकना नहीं। अनवरत लिखना।'' गणेशजी ने कहा– ''ठीक है। मैं महाभारत लिखता हूँ। आप बोलते–बोलते रुकना नहीं।'' और गणेश जी ने महाभारत लिख दी। **– बाड़मेर (राजस्थान)**

## बढ़ता क्रम 15

देवांशु वत्स

1. हे, ऐ, अरे आदि संबोधन सूचक शब्द।
2. निवास-स्थान, ठिकाना।
3. कै या उल्टी करना, भैंस की तरह चिल्लाना।
4. सहारा ले कर बैठना।
5. ओझा का काम।
6. अंत तक साथ देना।

| | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1. | ओ | | | | | |
| 2. | ओ | | | | | |
| 3. | ओ | | | | | |
| 4. | ओ | | | | | |
| 5. | ओ | | | | | |
| 6. | ओ | | | | | |

उत्तर: 1. ओ, 2. ओक, 3. ओकना, 4. ओठंगना, 5. ओझाईगीरी, 6. ओर निबाहना।

# आलसी सूरज

मूल तमिल – चक्रवर्ती राजगोपालाचारी
हिन्दी अनुवाद –एस. भाग्यम् शर्मा (जयपुर)

''अरे, बाप रे! बहुत हुआ ये धंधा।'' मक्खी बोली।

''तुमको क्या इतना कष्ट हुआ?'' मन्दवेली (एक स्थान का नाम) की जमीन को नोचते हुए मुर्गे ने पूछा।

''बंदरगाह से मैलापुर तक बोरियों से लदे हुए गाड़ी को चलाकर आओ तो तुम्हें पता चले।'' मक्खी ने उत्तर दिया।

''कौन–सी बोरियाँ? कौन–सी गाड़ी को तुमने खींचा? मेरे तो समझ में कुछ भी नहीं आ रहा है।'' मुर्गे ने कहा।

''तुम्हें कैसे पता चलेगा? जमीन को खोदकर कीड़े–मकौड़े, गिरे हुए चावल आदि को खाने वाले जीव हो तुम। तुम्हें इसके बारे में क्या पता है? मैं आज एक आदमी के पीठ पर बैठी फिर उसकी गाड़ी को खींच–खींचकर यहाँ लाकर छोड़ा। उस थकावट को तुमसे कहने का क्या फायदा?'' मक्खी बोली।

''तुममें इतनी शक्ति कहाँ से आई? गाड़ी तो बहुत भारी होती है ना?'' मुर्गे ने पूछा।

''ताकत तो अंदर से काम करने की इच्छा व जोश जिसमें हो उसमें होती है। रास्ते में खाने के सामान की अनेक दुकानें थीं। दुकानों में टंगे केले खूब पककर खराब हो रहे थे। सोचा, उधर खड़ी हो जाऊँ। बार–बार मेरी इच्छा हुई पर बेचारा आदमी! वह गाड़ी कैसे खींचेगा? यह सोचकर, दया करके मैं खाने वाली जगह की किसी दुकान पर नहीं रुकी।'' मक्खी बोलती गई।

''तुम्हारा जीवन धन्य है। मेरी भी इच्छा है कि अच्छा बनकर रहूँ, ऐसा सोचता हूँ पर होता नहीं है। क्योंकि इन कीड़े–मकोड़ों के स्वाद को मैं भूल ही नहीं पाता।'' मुर्गा बोला।

''अच्छे लोगों का ये जमाना है नहीं। मनुष्य लोग दवाई डाल–डालकर हमें मार रहे हैं। हमने क्या किया? ये मनुष्य पता नहीं इतना क्रोधित होकर आवेश में आकर हमारे नाम पर युद्ध कर रहे हैं।'' मक्खी बोली।

''कोई बीमारी के कीटाणु को देख डरकर ऐसा कर रहे हैं वो कीटाणु तुम्हारे पैरों में व तुम्हारे नाक पर चिपक कर मनुष्य के शरीर में व खून में चला जाता है ऐसा मनुष्य कह रहा है।'' मुर्गे ने उत्तर दिया।

उसके लिए हम क्या करें? क्या हम तालाब में जाकर अच्छी तरह नहाकर फिर लोगों पर बैठें क्या? हम स्नान करने पर बैठ सकते क्या? स्नान करते ही हम मर जायेंगे।'' मक्खी बोली।

''सच है।'' बड़े दु:ख से बोला मुर्गा। मक्खी बोलने लगी ''कचरे के बर्तन को भी अब ढँकना शुरू कर दिया। पर कुछ पुण्यात्मा औरतें कचरे के बर्तन को खोल कचरा डालकर फिर ढँके बिना ही छोड़ देती हैं। हमारे ऊपर इन कुछ माताओं की तो कुछ दया है।''

''ठीक है! मुझे सोना है, नहीं तो सुबह जल्दी उठकर सूरज को जगा नहीं सकता। मैं चिल्ला कर बांग न दूं तो आलसी सूरज सोता ही रहेगा, जागेगा ही नहीं।'' मुर्गे ने कहा।

उस समय चन्द्रमा धीरे से पूर्व में निकला। मुर्गे व मक्खी की बातों को सुनकर मन ही मन हँसा। उसने सोचा, ''मेरे लिए तो कोई मुर्गा नहीं बोला। मैं अपने आप उठ गया। परन्तु आज उसे ग्रहण डस लेगा, उसे यह पता ही नहीं था।

– जयपुर
(राजस्थान)

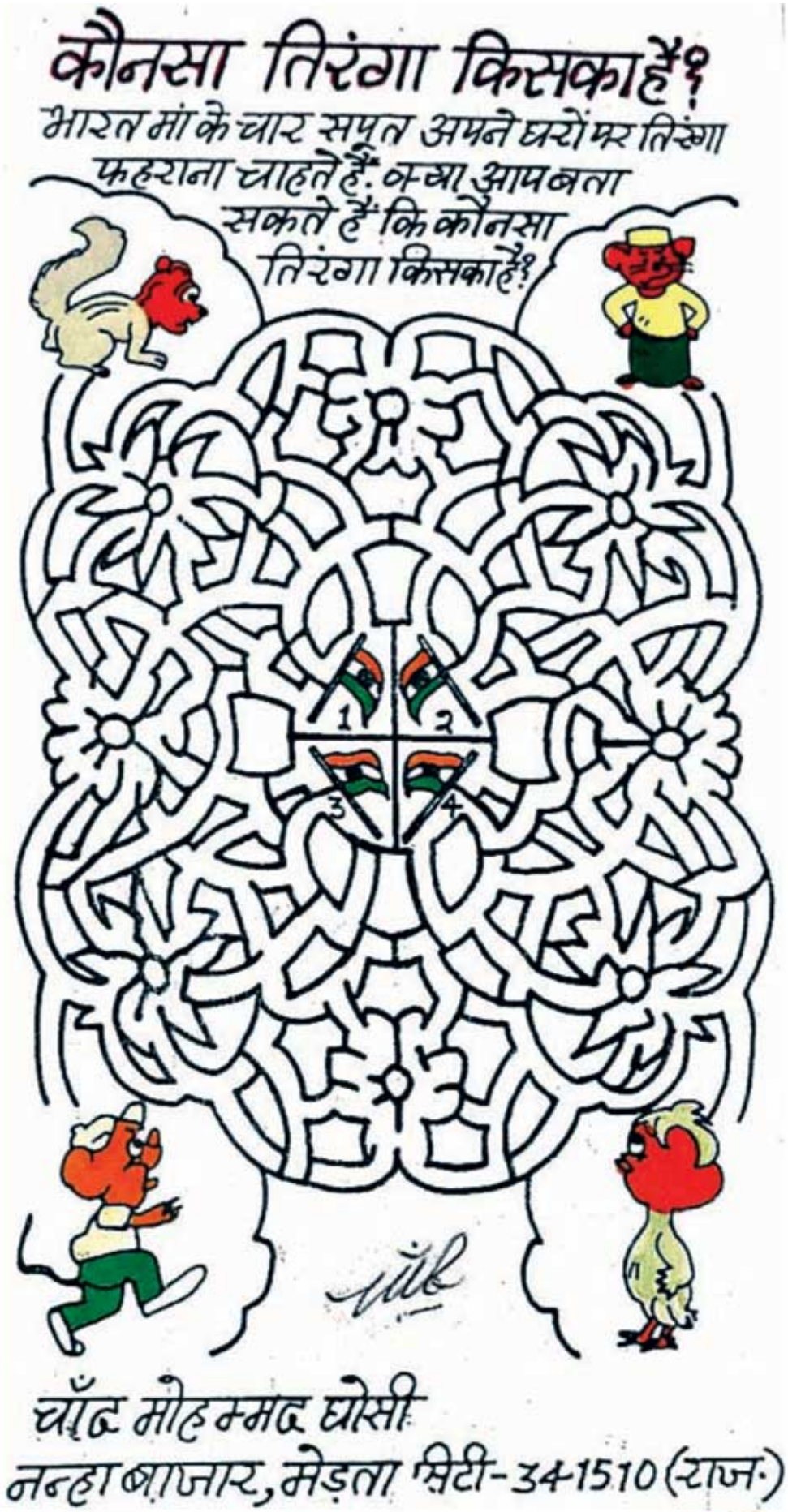

विवेकानंद जयंती १२ जनवरी

# स्वामी विवेकानन्द

– विनोद चन्द्र पाण्डेय 'विनोद'

स्वामी विवेकानन्द को शत–शत विनम्र प्रणाम है।
अब भी सुवासित हो रहा, उनका सुयश अभिराम है।।
देता सभी को प्रेरणा, शुभ कार्य श्रेष्ठ ललाम है।
अध्यात्म के इतिहास में उनका सुपरिचित नाम है।।
श्री ईश के प्रति आस्था, प्रभु के लिए सम्मान था।
निज धर्म–संस्कृति का उन्होंने नित किया गुणगान था।।
निज जन्म–भू, निज देश पर उनको अमिट अभिमान था।
वेदान्त, दर्शन का उन्हें उन्नत अपरिमित ज्ञान था।।
उनको मिली वाणी विमल, लख चमत्कृत संसार था।
वक्तृत्व की अद्भुत कला पर भी उन्हें अधिकार था।।
थी लेखनी अति धन्य अनुपम और श्रेष्ठ विचार था।
मस्तिष्क में होता प्रवाहित ज्ञान–पारावार था।।
जागो उठो आगे बढ़ो का दे दिया संदेश था।
उनसे समादृत हो सका जग में हमारा देश था।।
हम भारतीय कृतज्ञ हैं, देते उन्हें सत्कार हैं।
उनके ऋणी हम लोग सब करते प्रकट आभार हैं।।

– लखनऊ (उ. प्र.)

# संक्रांति : पर्व एक नाम अनेक

मकर संक्रांति (छत्तीसगढ़, गोआ, ओड़ीसा, हरियाणा, बिहार, झारखंड, आंध्रप्रदेश, तेलंगाना, कर्नाटक, केरल, मध्यप्रदेश।
ताड़ पोंगल, उझवर तिरुनल (तमिलनाडु)
माघ साजी (हिमाचल प्रदेश, लद्दाख)
शिशुर सेंक्रात (कश्मीर)
ओणम (केरल)
खिचड़ी (उत्तरप्रदेश, पश्चिमी बिहार)
पौष संक्रांति (पश्चिम बंगाल)
मकर संक्रमण (कर्नाटक)
उत्तरायणी (गुजरात, उत्तराखंड)
माघी (हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, पंजाब)
भोगाली बिहु (असम)
मकरचौला (उड़ीसा)
सूर्य कुंभ पर्व (सूरीनाम)
पौष संक्रांति (बांग्लादेश)
पोंगल/खिचड़ी (मॉरीशस, सूरीनाम, त्रिनिदाद टौबेगो)
माघे संक्रांति/माघी संक्रांति/खिचड़ी (नेपाल)
/सोंगकरन (थाईलैंड)
पि–मा–लाओ (लाओस)
थिंयान (म्यांमार)
मोहा संगक्रान (कंबोडिया)

कविता

# उनको नमन करें

– अखिलेश श्रीवास्तव 'चमन'
– लखनऊ (उ. प्र.)

चट्टानों जैसा दृढ़ निश्चय
अतुलित जिनका बल।
अतुलित शौर्य, पराक्रम अतुलित
अद्भुत रण–कौशल।
हमको अमृत मिले इसलिए
पीते स्वयं गरल।
जिनके यश का गान निरंतर
धरती, गगन करें।
उनको नमन करें।
आओ! हम उनको नमन करें।

भूल गए अपनी सुख, सुविधा
भूल भूख और प्यास।
अविचल जमे रहे सीमा पर
निसि–दिन बारह मास।
दी ना आने आँच देश पर
है साक्षी इतिहास।
जाड़ा, गर्मी, धूप, शीत
हँस–हँसकर सहन करें।
उनको नमन करें
आओ! हम उनको नमन करें।

चूर–चूर कर दिया जिन्होंने
अरि का गर्व, गुमान।
हँसते–हँसते हुए देश की
रक्षा में बलिदान।
कलुषित होने दिया नहीं
लेकिन माँ का सम्मान।
राष्ट्र–भक्ति के हवन–कुंड में
निज का हवन करें।
उनको नमन करें
आओ! हम उनको नमन करें।

सैनिक अपने देश के
उन्नत भाल सरीखे हैं।
देश की रक्षा में चौकन्ने
ढाल सरीखे हैं।
और देश के दुश्मन खातिर
काल सरीखे हैं।
हाहाकार मचा देते
जब अरि का दमन करें
उनको नमन करें
आओ! हम उनको नमन करें।

# परिश्रम सबसे बड़ा

– अलका जैन

नील एक बहुत ही प्यारा बच्चा है। अपने परिवार के साथ शहर में आए हुए उसे कुछ ही दिन हुए हैं। इससे पहले वह जिस गाँव में रहता था वहाँ उनकी जमीन थी जिस पर उसके पिता जी और दादा जी खेती करते थे। कोरोना महामारी के समय उसके दादा जी बहुत बीमार हुए और उनके उपचार के लिए जमीन बेचनी पड़ी। यह संतोष की बात थी कि दादा जी ठीक हो गए थे लेकिन समस्या यह थी कि जमीन के बिना घर का खर्च कैसे चलाएँ? आजीविका की तलाश में उनका पूरा परिवार ही पास के शहर में आ गया था। उन्होंने कमरा भी किराए पर ले लिया।

नील के पिता जी ने कई दिनों तक काम खोजा लेकिन उन्हें निराशा ही हाथ लगी। एक दिन जब वे घर लौटे तो बहुत प्रसन्न दिख रहे थे। उन्होंने नील को बहुत दुलारा और फिर नील के दादा जी और माँ से कहा– ''मुझे काम मिल गया है... यहाँ पास ही में एक बहुत बड़ा मॉल बन रहा है। ठेकेदारों का पूरा दल है। उस दल में मुझे भी लिया गया है।''

यह सुनकर माँ ने आश्चर्य से कहा– ''पर यह काम तो खेती के काम से बिलकुल अलग है... इसमें परिश्रम भी कम नहीं होगा।''

नील के पिता जी मुस्कुराते हुए बोले– ''हम किसान परिश्रम से कब जी चुराते हैं? परिश्रम की कमाई से सुख भी बहुत मिलता है।''

नील सारी बातें ध्यान से सुन रहा था। उसने पूछा– ''पिता जी! मैं भी विद्यालय से आने के बाद आपकी सहायता कर दिया करूँगा।''

पिता जी ने नील को गले लगा लिया। नील मन ही मन योजना बनाने लगा कि उसे पिता जी की सहायता कैसे करनी है।

अगले दिन जब नील विद्यालय से लौटा तो उसने देखा कि सामने वाले मॉल का काम जोर–शोर से चल रहा था। उसने माँ से कहा– ''माँ! मुझे देखना है कि पिता जी कैसे काम करते हैं।''

माँ ने उसे कहा– ''ठीक है... पहले भोजन कर लो फिर चले जाना।''

नील ने जल्दी–जल्दी भोजन किया। दादा जी ने कहा– ''मैं भी चलता हूँ।''

नील ने दादा जी को आराम करने के लिए कहा और बोला– ''दादा जी! बाहर बहुत धूप है... अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखिए।''

दादा जी ने नील से कहा– ''बेटा! तुम भी यहीं रुको। तुम्हें धूप लग जाएगी।''

तभी माँ छाछ का गिलास ले आई थी। नील ने

झटपट छाछ पी ली और दादा जी से कहा– ''मैं जल्दी ही आता हूँ।''

अपना खिलौना ट्रैक्टर उठाकर नील सामने वाली साइट की ओर बढ़ने लगा। जिस जमीन पर काम चल रहा था उससे सटे हुए मकान में ही उन्होंने कमरा किराए पर ले रखा था इसलिए सड़क पार करने की कोई परेशानी भी नहीं थी। नील फटाफट साइट पर पहुँच गया था। उसे पिता जी कहीं नहीं दिखे। वह वहाँ पत्थरों के ढेर पर बैठ गया और पिता जी की प्रतीक्षा करने लगा। उसने देखा कि बहुत सारे मजदूर तगारी में पत्थर भर–भर के आगे बढ़े जा रहे थे और गाना गा रहे थे– ''साथी हाथ बढ़ाना...एक अकेला थक जाएगा... मिलकर बोझ उठाना...।'' तभी नील को एक जानी पहचानी आवाज सुनाई दी। यह तो

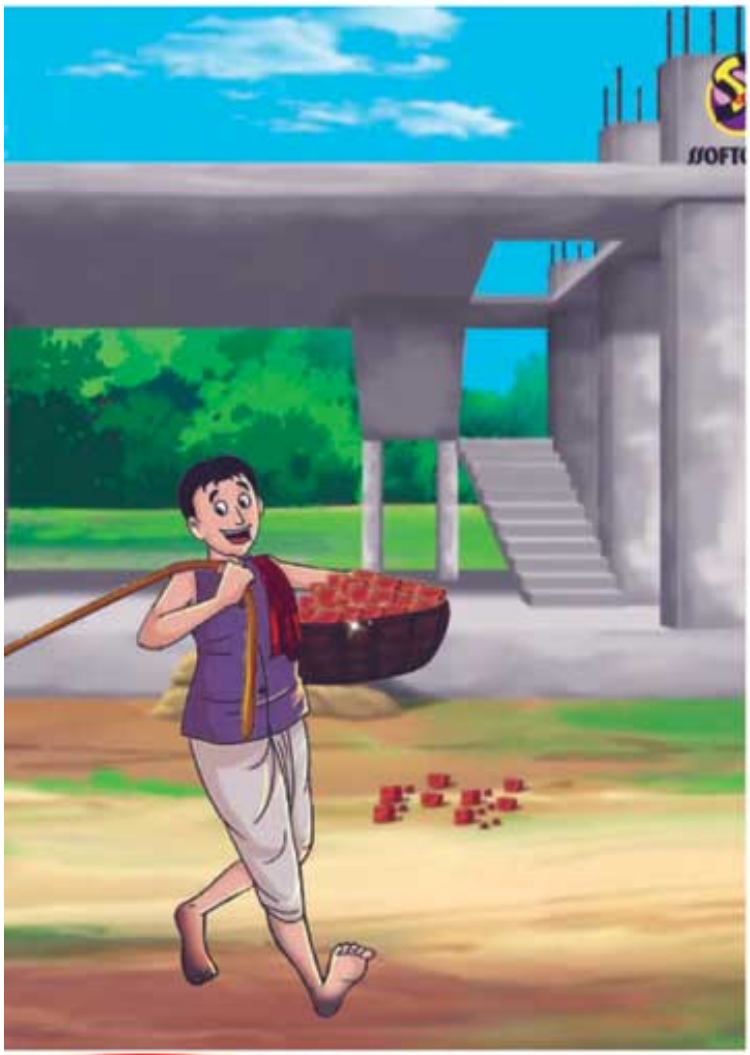

उसके पिता जी की आवाज थी। उन्होंने अपने चेहरे पर गमछा लपेट रखा था। नील चिल्लाया– ''पिता जी!''

पिता जी ने उसे देखकर कहा– ''तुम इतनी धूप में क्यों आए बेटा?''

नील आश्चर्य से पिता जी की ओर देख रहा था। वह बोला– ''पिता जी! ठेकेदार तो मुखिया की तरह होता है ना... पर आप तो मजदूर बनकर ही काम कर रहे हैं?''

पिता जी मुस्कुराते हुए बोले– ''बेटा! मेंहनत के काम में ऐसा बंटवारा नहीं होता। तुमने देखा था ना में मैं जमीन का मालिक था पर काश्तकारों के साथ मिलकर काम करता था और यहाँ भी करूँगा।''

नील को अपने पिता जी पर बहुत गर्व अनुभव हुआ। उसने कहा– ''पिता जी! मैं भी आपकी सहायता करूँगा।''

पिता जी हँसते हुए बोले– ''मेरा नन्हा बेटा कैसे सहायता कर पाएगा?''

नील ने अपना खिलौना ट्रैक्टर पत्थरों से भरा और उसे डोरी से खींचते हुए साइट की ओर बढ़ने लगा। वहाँ काम कर रहे सारे मजदूर नन्हें बच्चे की भावना देखकर मुस्कुरा रहे थे। नील बहुत जोर–शोर से काम में लगा हुआ था। उसे बहुत प्रसन्नता थी कि वह अपने पिता जी की सहायता कर पा रहा था। वहाँ काम कर रहे मजदूरों को यह नन्हा मजदूर बहुत प्यारा लगा। सब उसे बहुत दुलार करते थे। विद्यालय से आते वही वह यहाँ आ जाता था... कभी किताबें लेकर तो कभी ट्रैक्टर लेकर...

नील के माता–पिता और दादा जी यह देखकर बहुत प्रसन्न थे कि नील को यह बात समझ में आ गई थी कि कोई काम छोटा या बड़ा नहीं होता परिश्रम बड़ा होता है।

**– जयपुर**
**(राजस्थान)**

# पुस्तक परिचय

**कुछ तुम बोलो कुछ हम**
मूल्य २००/-

डॉ. बानो सरताज समकालीन बाल साहित्यकारों में एक प्रतिष्ठित नाम है। बाल कथा साहित्य में भी लोककथाओं का अपना अलग आस्वाद होता है फिर से कथाएँ गीत युक्त हों तो मन झूम-झूम उठता है। ऐसी ही सरस गीतों भरी कहानियाँ प्रस्तुत है। डॉ. बानो सरताज की कलम से आपके लिए इस पुस्तक में।

प्रकाशक- साहित्यागार धामानी मार्केट, कीमती चौरा रास्ता, जयपुर (राजस्थान)

---

**मिट्टू चाचा**
मूल्य ६०/-

श्री पवन कुमार वर्मा बाल कहानियों के प्रसिद्ध रचनाकार हैं। मिट्टूचाचा उनकी रोचक १० बाल कहानियों का लुभावना संकलन है। जो आपको सिखाएँगी भी गुदगुदाएँगी भी।

प्रकाशक- निखिल पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, २७, शिवरामकृपा विष्णु कॉलोनी, शाहगंज, आगरा (उत्तर प्रदेश)

---

**पंखुरियाँ**
मूल्य ३००/-

श्री. अश्वनी कुमार पाठक बाल साहित्य रचनाकारों में एक वरिष्ठ, अनुभवी और सफल रचनाकार माने जाते हैं। आपकी इस कृति में ५१ रोचक, प्रेरणाभरी, मनोरंजक बाल कविताएँ प्रकाशित हैं।

प्रकाशक- नमन प्रकाशन, ४२३७, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-११०००२

---

**अपनी धरती अपना देश**
मूल्य १८०/-

सुस्थापित बाल कहानीकार श्री पवन कुमार वर्मा की १४ बाल कहानियों वाली यह कृति आपका न केवल मनोरंजन करेगी अपितु अपने बहुरंगी चित्रों से लुभाती आपके चिंतन को ऊर्जा भी देगी।

प्रकाशक- एक्सप्रेस पब्लिशिंग, नम्बर ८, ३ कासस्ट्रीट, चेन्नई-०४, (तमिलनाडु)

---

**नटखट राजू**
मूल्य ७५/-

डॉ. सतीशचन्द्र भगत हिन्दी बाल साहित्य के वरिष्ठ लेखकों में स्थापित नाम है। आपकी २२ से अधिक पुस्तकों में 'नटखट राजू' १६ सुन्दर, मनोरंजन व प्रेरणापूर्ण बाल कहानियों का संकलन है जो आपको अवश्य भाएगा।

प्रकाशक- समीक्षा प्रकाशन, जे. के. मार्केट, छोटी कल्याणी, मुजफ्फरपुर-०१ (बिहार)

# विज्ञान व्यंग

-संकेत गोस्वामी

# बिजली के तार ने कालू को पकड़ा

– डॉ. मनोहर भण्डारी

एक दिन गोपाल का बड़ा लड़का कालू खेत में काम कर रहा था। मोटर से खेत में पानी छोड़ा जा रहा था। गोपाल का खेत रामू के खेत के पास था। काम समाप्त होने पर कालू मोटर बंद करने गया। भूल से उसका हाथ बिजली के खुले तार से छू गया।

उसे बिजली का झटका लगा तो वह जोर से चिल्लाया। बिजली के तारों ने उसे पकड़ लिया था। रामू ने उसकी आवाज सुन ली थी। वह दौड़ते हुए आया। देखते ही वह सब समझ गया।

उसने उसी समय अपना पजामा उतारा और पाजामा कालू के गले में डालकर उसे खींच लिया। कालू जमीन पर गिर पड़ा।

रामू ने देखा कालू होश में था। उसकी नाड़ी और सांस ठीक चल रही थी। कालू बहुत डर गया था। उसका सारा शरीर डर के मारे कांप रहा था। उसके हाथ पर घाव हो गया था। रामू ने उसके घाव पर पट्टी बांध दी।

कालू के पिता तथा कुछ और लोग वहाँ आ गए। रामू के कहने पर उसे नींबू का शरबत पिलाया गया। थोड़ी देर बाद दूध भी पिलाया। कालू को अब ठीक लग रहा था। उसकी कंपकंपी भी रुक गई थी।

रामअवतार ने पूछा– ''रामू बेटे! तार से चिपकने पर क्या करना चाहिए?''

रामू ने कहा– ''पहले तो बिजली का खटका बंद करना चाहिए। यदि बिजली बंद नहीं कर सकते तो तो सूखी लकड़ी या कपड़े से चिपके हुए आदमी को तार से अलग करना चाहिये।''

राम अवतार ने पूछा– ''यदि जमीन गीली हो तो क्या करना चाहिये?''

रामू ने कहा– ''सूखी लकड़ी का पटिया या कुर्सी रख देवें। उस पर खड़े होकर चिपकने वाले को तार से अलग करें। रामअवतार ने जानना चाहा यदि उसकी सांस बंद हो जाए तो क्या करना है?''

रामू ने बताया– ''उसको मुँह से सांस देना चाहिये।''

राम अवतार ने पूछा– ''मुँह से सांस क्या वैसे ही देते हैं जैसे तुमने तालाब में डूबे बालक को दी थी?''

रामू ने कहा– ''हाँ, ठीक वैसे ही। उसे नकली सांस देना कहते हैं।''

रामू ने आगे बताया– ''रोगी को डॉक्टर साहब के पास एक बार अवश्य दिखाना चाहिए।'' बातें समाप्त हो गई थी। कालू पूरी तरह ठीक हो गया था।

– इन्दौर (म. प्र.)

प्रेरक प्रसंग – २३ जनवरी जयंती

# अपमान का बदला

– गोविन्द भारद्वाज

'शटपअ, ईडियट... यू ब्लैक इंडियंस'। एक गोरा बालक कक्षा में ही किसी बात पर एक भारतीय बच्चे का कॉलर पकड़कर झकझोरते हुए चिल्लाया। पूरी कक्षा में सन्नाटा छा गया। भारतीय बालक सहम गया। वह कातर निगाहों से गोरे बच्चे की तरफ देखता रहा। किन्तु उसकी बगल की सीट पर बैठे हुए एक–दूसरे बच्चे की भुजाएँ फड़कने लगीं। उस तक कक्षा में अध्यापक नहीं आए थे।

'डैम डॉग!' किसी को बीच–बचाव न करते देख गोरा बालक शेर की तरह फिर दहाड़ा। भारतीय बालक की आँखों में क्षमा का भाव साफ छलक रहा था, किन्तु उसके दूसरे भारतीय सहपाठी ने नेत्रों में चिंगारियाँ निकल रही थी। वह गोरे बालक से बदला चुकाने के लिए आतुर था। तभी अध्यापक ने कक्षा में प्रवेश किया। उस भारतीय बालक की इच्छा भीतर ही सुलग कर रह गयी।

मध्यान्तर हुआ तो उसने अपने सहपाठी बालक को अपने पास बुलाया और कहा– ''तुम डरपोक हो। यदि उस गोरे लड़के ने मेरा अपमान किया होता तो, मैं उसे मारते–मारते उसका कचूमर निकाल देता..। लेकिन घबराओ मत! मैं उस अँग्रेज के बच्चे से तुम्हारे अपमान का बदला अवश्य लूँगा। भले ही वो किसी बड़े अधिकारी का बेटा हो।''

सहपाठी श्रद्धा और आभार से गदगद हो गया और कुछ सशंकित होकर बोला– ''आप ठीक कहते हो, हमें बदला लेना चाहिए, परन्तु इसका परिणाम भयंकर हो सकता है।''

''इसकी चिंता तुम मत करो। अन्याय का विरोध करना हर आदमी का कर्त्तव्य है, चाहे उसका परिणाम कुछ भी हो। हमारी अन्याय सहने की कमजोरी ने ही हमें अँग्रेजों का गुलाम बना दिया है।''

छुट्टी हुई। दोनों भारतीय साथी विद्यालय से बाहर आ गये। आगे–आगे अँग्रेज चल रहा था। सहसा उसको टंगड़ी लग गयी। वह चारों खाने चित होकर गिर पड़ा। वह भारतीय बालक उसकी छाती पर सवार था और उसे अंधाधुंध घूंसे मार रहा था। अँग्रेज बालक हक्का–बक्का सा उस भारतीय को देखता रहा। विद्यालय के सारे बच्चे वहाँ घिर आए थे। छाती पर सवार भारतीय बालक ने कहा, ''भविष्य में यदि किसी भारतीय बालक के साथ तूने दुर्व्यवहार किया तो हड्डी–पसली एक कर दूँगा।'' यह चेतावनी देने वाला बालक था– **सुभाष चंद्र बसु**।

**– अजमेर**
**(राजस्थान)**

# राजू का गुस्सा

– सुमन ओबेरॉय

राजू को गुस्सा बहुत आता था, उसके माता–पिता बहुत परेशान रहते थे। शाला आस–पड़ोस, यहाँ तक कि अपने छोटे भाई चिंटू से भी उसकी हाथापाई हो जाती।

आज भी यही हुआ। शाम के पाँच बजे थे। पिता जी बाजार गये हुए थे, दादा जी सैर के लिए निकल गए, माँ रसोई में रात के खाने की तैयारी कर रही थीं। छः वर्षीय चिंटू घर में खेल रहा था। राजू ने अपना बल्ला उठाया और बाहर निकल गया।

किन्तु पंद्रह मिनट बाद ही घर में मानो तूफान आ गया। राजू गुस्से में पैर पटकते हुए घर में घुसा, चिंटू को धक्का दिया। चिंटू गिर गया और दर्द के मारे चिल्लाने लगा। राजू ने जोर से अपने कमरे का दरवाजा बंद किया। कमरे के अंदर से चीजें पटकने की आवाजें आने लगीं। माँ दौड़कर आईं, उन्होंने बार–बार दरवाजा खटखटाया, खूब आवाजें दीं, किन्तु राजू ने दरवाजा नहीं खोला। इधर चिंटू गला फाड़ कर रो रहा था। माँ उसे चुप कराने दौड़ीं। इतने में पिता जी बाजार से लौट आए, दादा जी भी सैर करके वापस आ गये। वह लोग घर में चीख पुकार सुनकर घबरा गए। जब माँ ने उन्हें सारी बात बताई तो वह दोनों भी राजू के कमरे की ओर भागे, किन्तु राजू ने दरवाजा नहीं खोला। सबको चिंता हो रही थी कि राजू ठीक–ठाक हो। समय बीतता जा रहा था, चिंता बढ़ती जा रही थी।

दादा जी ने सबको दूसरे कमरे में चले जाने को कहा। उन्होंने बड़े प्यार से राजू से कहा– ''राजू! दरवाजा खोलो, बच्चे डरो नहीं, यहाँ और कोई भी नहीं है, दरवाजा, खोलो, तुम मुझे प्यार करते हो न?''

राजू ने तुरंत दरवाजा खोल दिया और दादा जी के गले लग गया।

कमरे में अंदर का दृश्य देखकर दादा जी हैरान रह गए। सारे कमरे में उथल–पुथल मची हुई थी, लेकिन दादा जी ने उसे कुछ न कहा। उन्होंने राजू को चूमते हुए पूछा– ''बेटा! आज क्या हुआ था? किसी ने तुम्हें परेशान किया क्या?''

राजू तड़पकर बोला, ''मुझे तो सब परेशान करते हैं दादू! कोई मेरे साथ खेलना नहीं चाहता, चालाकी करके खेल से निकाल देते हैं। उद्यान वाले मित्रों ने भी धोखा किया तो मुझे क्रोध आ गया, मैंने भी उनकी विकटें उखाड़कर फेंक दी है और घर आ गया।''

दादा जी ने एकाएक पूछ लिया, ''पर लड़ाई

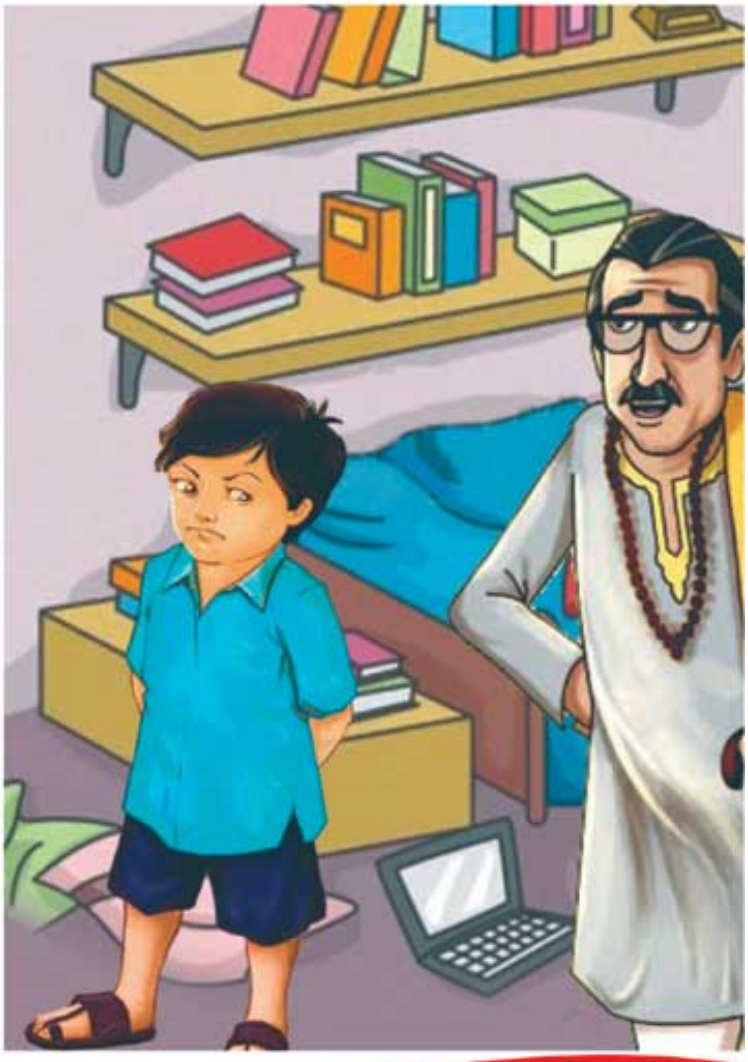

उनसे हुई तो धक्का अपने भाई चिंटू को क्यों दे दिया?'' राजू शर्मिंदा हो गया। बोला– ''मुझे उन लोगों की बातें सुनकर बहुत क्रोध आ रहा था। मन हो रहा था कि किसी को भी मार दूँ, धक्का दे दूँ, डंडे मारूँ। मुझे पता ही नहीं चला कि मैंने चिंटू को धक्का दे दिया है।''

दादा जी शांत स्वर में बोले, ''बेटा! तुम्हारे छोटे भाई का सिर दीवार से टकरा गया, उसे बहुत दर्द हो रहा है, वह बहुत रोया है।'' राजू लज्जित हो गया।

दादा जी ने उसे स्नेह से समझाया, ''बेटा! तुम स्वयं विचार करो क्रोध करने के कितने नुकसान होते हैं। तुम्हें दूसरों की बातें पसंद नहीं आ रहीं, तुम क्रोध करते हो वह तुम्हें छोड़ते चले जाते हैं, चिंटू तुम से भयभीत रहता है, उस पर बुरा असर पड़ रहा है, तुम्हारे माँ–बाप परेशान हो रहे हैं। ऐसे तो तुम अकेले पड़ जाओगे, आगे चलकर तुम्हें बहुत कष्ट होगा। तुम्हें नौकरी में अपने परिवार में, समाज में, सब जगह समस्याएँ आयेंगी। इस पर तुम्हें नियंत्रण करना ही पड़ेगा।'' राजू को दादा जी की बात समझ में आ रही थी। वह तपाक से बोला– ''किन्तु कैसे नियंत्रण करूँ?''

दादा जी शांत स्वर में बोले– ''देखो जब थोड़ा –सा क्रोध आ रहा हो तो पहले पानी पी लो, मन में गिनती दोहराओ, साथ–साथ कुछ काम करते जाओ– जैसे अपनी किताबों, कपड़ों की अलमारी ठीक करना, जूतों को व्यवस्थित करना, कमरा साफ करना इत्यादि। हाँ, यदि बहुत तेज गुस्सा आ रहा हो तो बाहर उद्यान में जाकर दौड़ लगाओ, गेंद को किक से मारो। जब गुस्सा ठंडा हो जाए तब घर आओ मुझसे या माँ–पिता जी से अपने मन की बात करो, क्रोध को नियंत्रित करके तुम सबके मित्र बन जाओगे, विद्यालय में अच्छे विद्यार्थी और घर में सबके दुलारे बन जाओगे।''

राजू तुरंत पूछ बैठा– ''चिंटू का भी?'' ''हाँ, चिंटू का भी।'' सुनते ही राजू जोर–जोर से हँसने लगा। दादा जी ने भी जोर से हँसते हुए उसे गले से लगा लिया।

– भोपाल (म. प्र.)

सुभाषित

## क्रोधो सर्वार्थ नाशकः

क्रोध यानि गुस्सा हमारे
सभी प्रकार के विनाश का
मूल कारण बन जाता है।

# श्री हुकमसिंह, श्री लाखनसिंह, श्री गोविंदसिंह, श्री तखतसिंह

वह ४ जनवरी १९६६ की रात थी। जिसमें मध्यप्रदेश के छतरपुर जिले के गौड़ नामक गाँव में साहस की रोमांचक गाथा लिखी गई। उस ठंडी रात्रि में एक डाकू दल महाराजसिंह नामक एक व्यक्ति के घर में डाका डालने पहुँचा। दनादन-दनादन गोलियाँ बरसने लगीं। डाकू चाहते थे कि गोलियों से ऐसा आतंक फैला दें कि कोई गाँव वाला इनकी सहायता करने पहुँचने का साहस न कर सके। लेकिन महाराजसिंह के दो बेटे किसी तरह घर से निकलकर गाँव में पहुँच ही गए और सहायता के लिए पुकारने लगे।

गाँव में ऐसा संकट किसी पर भी कभी भी आ सकता है। यह गाँव वाले जानते थे इसलिए साहस पूर्वक एक-दूसरे की सहायता करना वे अपना धर्म मानते थे। पुकार सुनी तो श्री. हुकुमसिंह, श्री लाखनसिंह, श्री गोविन्द सिंह और श्री तखतसिंह के साथ अनेक गाँव वाले अपने-अपने घरों से निकलकर डाकुओं को खदेड़ने निकल पड़े। डाकुओं की गोलियों से दो ने अपने प्राण भी गँवाएँ पर गाँव वालों ने पैर पीछे न हटाए। उनकी लाठी, भाले ही बन्दूकधारी खूँखार डाकुओं के साथ लोहा ले रहे थे।

महाराज सिंह व तखतसिंह गोली लगने से मारे गए। गोविन्दसिंह अपने भाई के साथ घायल हो गए। हुकुमसिंह व लाखनसिंह ने गाँव वालों का साहस बढ़ाते हुए संघर्ष जारी रखा। अंततः डाकू एक मकान में बंदी बना लिए गए। एक भाग निकला थोड़ी देर में पुलिस आ गई व बंदी डाकू पकड़े गए।

गाँव वालों के साहस को बड़ी सफलता मिली। श्री. हुकुमसिंह, श्री. लाखनसिंह, श्री. गोविन्दसिंह और श्री. तखतसिंह को अशोकचक्र के रूप में साहस का सम्मान मिला लेकिन श्री. तखतसिंह ग्राम रक्षा करते हुए पहले ही बलिदान हो चुके थे उन्हें अशोक चक्र मरणोपरांत ही मिला।

समाचार

**जबलपुर।** दिनाँक १३ नवम्बर २०२२ को जबलपुर की राष्ट्रीय साहित्यिक संस्था कादम्बरी द्वारा अखिल भारतीय साहित्यकार एवं पत्रकार सम्मान समारोह में मथुरा के वरिष्ठ बाल साहित्यकार डॉ. दिनेश पाठक 'शशि' को श्री. रामेन्द्र तिवारी स्मृति पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

यह सम्मान मंचासीन कादम्बरी संस्था के अध्यक्ष एवं साहित्यभूषण आचार्य भगवत दुबे, डॉ. राजकुमार सौमित्र, डॉ. भगवानस्वरूप शर्मा चैतन्य, संस्था महासचिव श्री. राजेश पाठक प्रवीण व साध्वी के कर कमलों द्वारा अंगवस्त्र, सम्मान पत्र और पाँच हजार रुपये की सम्मान राशि प्रदान कर किया गया।

# खुशहाली

चित्रकथा-

मेरे राज्य में सब खुशहाल हैं दया,दान,धर्म सब है यहां...

मंत्री राजा से सहमत नहीं था बोला-

महाराज, हमारे पड़ौसी मित्र राज्य में भी बहुत खुशहाली है ,मैं चाहता हूं आप वहां के राजा से मिलें..

पड़ौसी राजा के यहां-

..हमारे महाराज शूरसेन के राज्य में सब ओर खुशहाली है दया,दान,धर्म सब है

..हमारे राजा की ओर से प्रतिदिन पांच हजार भिखारियों को खाना खिलायाजाता है, खूब दान-पुण्य होता है...

माफ करना भाई, मुझे तो सिर्फ यही पूछना है जिस राज्य में पांच हजार भिखारी हैं वहां सब ओर खुशहाली कैसे हुई?

# दो बातूनी

– दीपांशु जैन

एक गाँव में दो बातूनी आदमी रहा करते थे। दोनों की आँखें कमजोर थीं और वे दूर की चीजें साफ–साफ नहीं देख पाते थे। मगर दोनों यह मानने को तैयार नहीं थे कि वे नजर के कच्चे हैं। उल्टे दोनों एक–दूसरे पर अपनी दृष्टि की तेजी सिद्ध करने का प्रयत्न करते रहते थे।

एक दिन उन दोनों के सुनने में आया कि गांव के चौराहे के बीच में जो प्रतिमा स्थापित की जाने वाली थी, वह बनकर तैयार हो गयी है और अगले दिन चौराहे के ऊँचे चबूतरे पर रख दी जायेगी। उन दोनों ने तय किया कि इस अवसर पर वह एक–दूसरे की निगाहों की तेजी की परीक्षा लेंगे। तय हुआ कि मूर्ति रखे जाने के बाद वे चौराहे से दूर एक पेड़ पर बैठे–बैठे मूर्ति को ध्यान से देखेंगे। जो अधिक बारीकी से देख पायेगा, वह जीता हुआ माना जायेगा। शर्त पक्की कर ली गयी और वे विदा हुए।

शर्त तो हो गयी किन्तु दोनों के मन में चोर था। दोनों जानते थे कि दूर से उन्हें कुछ भी दिखाई नहीं देगा, किन्तु कोई भी हारना नहीं चाहता था। अलग होकर दोनों को एक उपाय सूझा। वे एक–दूसरे से छिपकर उस शिल्पकार से मिल आये, जिसने मूर्ति बनायी थी। दोनों ने शिल्पकार से मूर्ति के बारे में

जानकारी ले ली, ताकि अगले दिन उसे दुहराकर दूसरे को नीचा दिखाया जा सके। शिल्पकार को तो वास्तविकता का पता था नहीं, इसलिए उसने एक को मूर्ति के मुँह और पेट के बारे में अधिक बताया और दूसरे को पीठ और पैरों के बारे में।

अगले दिन दोनों वादे के अनुसार चौराहे से दूर पेड़ पर चढ़कर बैठ गये। समय का अनुमान कर उन्होंने अपना-अपना विवरण देना प्रारम्भ कर दिया।

एक ने कहा- ''उसके गले में माला लटक रही है, जो सीने तक चली आती है। बीच में हीरा है।''

दूसरा चट से बोला, ''माला ? एक बच्चा है, जिसे लादकर वह खड़ी है।''

पहला बोला- ''ध्यान से देखो, माला है और हीरा!''

दूसरा बोला- ''तुम ध्यान से देखो, इतना बड़ा बच्चा नहीं देख पा रहे! बच्चे की आँखें बंद हैं।''

दोनों झगड़ने लगे। दोनों अपनी-अपनी बात पर अड़े थे।

जब कुछ तय नहीं हो पाया तो उन्होंने उतावली में एक राहगीर को रोका। उसके पास पहुँचकर एक ने कहा- ''जरा बताइये तो वह मूर्ति है ना उसकी...।''

''जी हाँ, उस मूर्ति की...।'' दूसरा बीच ही में बोल पड़ा।

राहगीर ने अचरज से आँखें फैलाकर दोनों को देखा और सिर पर हाथ मारकर दोनों की बात काटते हुए बोला, ''मूर्ति.... कैसी मूर्ति ? मूर्ति तो अभी तक रखी ही नहीं गयी है।''

इस तरह आचनक उनकी पोल खुल गयी और स्वयं से लज्जित होते हुए वे घर लौट गये।

**- भवानीमण्डी**
**(राजस्थान)**

# आपकी पाती

मेरे बचपन की सभी मधुर स्मृतियों में शीर्ष पर रही 'देवपुत्र' पत्रिका इस पत्रिका से मैं इतना प्रभावित हूँ कि अभी भी मैं इसका नियमित अध्ययन करने का इच्छुक हूँ किन्तु कुछ कारणों के चलते यह पत्रिका मुझ तक नियमित नहीं पहुँच रही है किन्तु दो-तीन महिनों के अंतराल के बाद यह पत्रिका मुझे प्राप्त होती है तो मेरी प्रसन्नता का ठिकाना नहीं रहता।

**- रूपसिंह राजपूत, नरसिंहपुर (म. प्र.)**

'देवपुत्र' में अपनी बात के लिए अभिनंदन। अपनी भाषा में अपनी बात बच्चों तक पहुँचाने की विलक्षण क्षमता है- आपके कथ्य में। 'देवपुत्र' (सितम्बर २०२२) का यह अंक अत्यंत सुन्दर, संग्रहणीय है। इसे संवारने में जिनके हाथ निरंतर लगे है, उन सभी का अभिनंदन!

**- सौ. पद्मा, डॉ. रमेश चौगांवकर**
**(गंजबासौदा)**

# सूर्या

आत्मनिर्भर भारत की पहचान
लाइटिंग | अप्लायेंसेस
पंखे | स्टील और पीवीसी पाइप

इनोवेशन, क्वॉलिटी और
विश्वसनीयता हमारी पहचान।

सूर्या के प्रोडक्ट केवल पूरे भारत में ही उपलब्ध नहीं बल्कि पूरी दुनिया के 50 से अधिक देशों को निर्यात किए जाते हैं। कम्पनी सभी ग्राहकों की ज़िन्दगी रौशन करने तथा सभी से इनोवेशन, गुणवत्ता और विश्वसनीयता का वादा करती है।

सूर्या रोशनी लिमिटेड
ई–मेलः consumercare@surya.in | www.surya.co.in suryalighting surya_roshni
दूरभाषः +91–11–47108000, 25810093–96 | टोल फ्री नंबरः 1800 102 5657

# खेलो मेरे साथ!

चित्रकथा: देवांशु वत्स

कविता

# सरसों के फूल

– राजा चौरसिया

बहुत ही रिझाते हैं, सरसों के फूल।
चित्त को चुराते हैं, सरसों के फूल।
चटक रंग हल्दिया,
पौधे हैं हरे-भरे।
माटी महतारी है,
वह इनका ध्यान धरे।
हँसते-मुस्काते हैं, सरसों के फूल।
दूर से बुलाते हैं, सरसों के फूल।
शीतकाल में ये खिले,
रहें चैत मास तक।
लगता है लगे नहीं,
इन्हें भूख-प्यास तक।
ना ये ठिठुर पाते हैं, सरसों के फूल।
छुओ तो लजाते हैं, सरसों के फूल।
गुच्छे का रूप लिए,
रहती हैं कलियाँ।
झुमके सी झूलने,
लगती हैं फलियाँ।
देखो लहराते हैं, सरसों के फूल।
झूम-झूम जाते हैं, सरसों के फूल।
गंध बहुत मंद मगर,
शोभा रसवंती।
तितलियाँ बढ़ाती हैं,
छटा वो बसंती।
भौरों को भातें हैं, सरसों के फूल।
खेत को सजाते हैं, सरसों के फूल।

– उमरियापान, कटनी (म. प्र.)

स्तम्भ

## विस्मयकारी भारत

प्रिय बच्चो! रिप्ले की विश्वप्रसिद्ध पुस्तक 'बिलीव इट और नॉट' के अनुवादक **श्री रवि लायटू जी** के मन में एक विचार कोंधा के रिप्ले ने १९८ देशों में घूमकर जैसे विस्मयकारी तथ्य एकत्रित किए हैं, वैसे बल्की उससे भी अधिक विस्यमकारी तथ्य तो हमारे भारत के किसी एक प्रदेश में ही मिल सकते हैं। यद्यपि पूरे देशभर में भ्रमण कर इनको एकत्रित करना बड़ा श्रम और व्यय साध्य कार्य था फिर भी इंटरनेट की सुविधा का उपयोग करते हुए श्री लायटू जी आपके लिए अनेक ऐसे तथ्य एकत्र किए हैं जिसमें आप अपने भारत के विस्मयकारी वैभव से परिचित हो सकेंगे। सुंदर साज-सज्जा के साथ श्री रवि लायटू जी द्वारा यह रोचक जानकारियाँ **विस्मयकारी भारत** स्तम्भ के रूप में आप इसी अंक से नियमित पढ़ सकेंगे। – **सम्पादक**

# रवि लायट्र का विस्मयकारी भारत

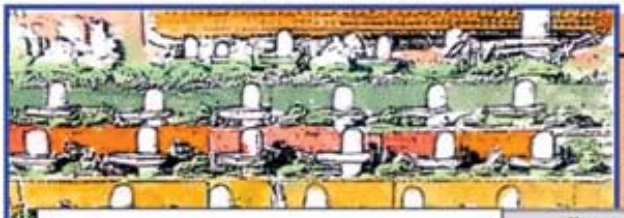

बैंगलुरु से 100 किमी. दूर कर्नाटक के कोलार ज़िले का एक छोटा-सा गांव है कमासान्द्रा। यहां स्थित कोटिलिंगेश्वर नामक एक ऐसा मन्दिर है जिसका आकार ही शिवलिंग जैसा है और इसमें विश्व का सबसे ऊंचा शिवलिंग स्थापित है जिसकी ऊंचाई है 108 फ़ीट। इतना ही नहीं, इस मन्दिर में छोटे-बड़े लाखों शिवलिंग भी स्थापित हैं जिनकी संख्या एक करोड़ तक ले जाने की योजना है जिनमें अब तक 90 लाख के करीब की स्थापना हो चुकी हैं।

आजकल की फ़िल्मों में आठ-दस गाने ही पर्याप्त माने जाते हैं पर सन 1932 में 211 मिनट लम्बी 'इंद्रसभा' नाम की एक ऐसी फ़िल्म भी बनी थी जिसने विश्व की सर्वाधिक गानों वाली फ़िल्म के तौर पर अपना रिकॉर्ड बनाया हुआ है। इस फ़िल्म में पूरे 71 गाने थे जिनका संगीत दिया था नागरदास ने।

पंजाब के निवासी अवतार सिंह मौनी विश्वभर में सबसे लम्बी और सबसे वज़नी पगड़ी के धारक हैं। इनकी पगड़ी की लम्बाई 645 मी. है और इसका वज़न है 45 किग्रा.।

पक्षियों को भी इंसानों की तरह जीने का हक है, बस इसी उद्देश्य को लेकर पिण्डवाड़ा तहसील के छोटे से गांव पेशुआ के भामाशाह ललित पुखराज जैन ने अपने ख़ुद के खर्च से 61' ऊंचा एक ऐसा बर्ड अपार्टमेन्ट बनवा दिया जिसमें सर्दी-गर्मी से ही नहीं बल्कि बिल्ली और सांप जैसे दुश्मन जीवों से भी पूरीतरह सुरक्षित रहते हुए 1560 पक्षी अलग-अलग दाना पानी की व्यवस्था के साथ आराम से बसे रह सकते हैं।

डाक पंजीयन : एम.पी./आय.डी.सी./६२३/२०२१-२०२३ | आर.एन.आय. पं. क्रं. ३८५७७/८५
प्रकाशन तिथि २०/१२/२०२२ | प्रेषण तिथि ३०/१२/२०२२ | प्रेषण स्थल- आर.एम.एस., इन्दौर

जुलाई २०२२ के अंक से देवपुत्र का संशोधित मूल्य निम्नानुसार है।

एक अंक ३०/- वार्षिक सदस्यता २००/- १५ वर्षीय सदस्यता २०००/-

एक ही पते पर १० या अधिक अंक एक साथ मँगवाने पर वार्षिक शुल्क १५०/- प्रति अंक

कृपया शुल्क भेजते समय चेक/ड्राफ्ट पर केवल
'सरस्वती बाल कल्याण न्यास' लिखें।

बाल साहित्य और संस्कारों का अग्रदूत

सचित्र प्रेरक बाल मासिक
देवपुत्र सचित्र प्रेरक बहुरंगी बाल मासिक

स्वयं पढ़िए औरों को पढ़ाइये

अब और आकर्षक साज-सज्जा के साथ

अवश्य देखें- वेबसाईट : www.devputra.com

सरस्वती बाल कल्याण न्यास, इन्दौर के लिए मुद्रक एवं प्रकाशन कृष्णकुमार अष्ठाना द्वारा टी.एन. ट्रेडर्स, सांवेर रोड, इन्दौर से मुद्रित एवं ४०, संवाद नगर, इन्दौर से प्रकाशित
प्रधान सम्पादक - कृष्णकुमार अष्ठाना